श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ पुष्प नं. ६

बिखरे पुष्प

श्रमणसंघीय एवं जैन दिवाकर प्र० व०
श्री चौथमल जी म० के प्रशिष्य
तपस्वीवर्य प्रिय व्याख्यानी
मुनिश्री मंगलचन्द जी म०
के सुशिष्य, संस्कृत विशारद
मुनिश्री भगवतीलालजी 'निर्मल'

प्रकाशक :

सौ. वीरम देवी धर्मपत्नि
खेमचन्द जी पारख
१०५२, हिरानन्द गली, दिल्ली-६

पुस्तक : बिखरे पुष्प

लेखक : भगवती मुनि 'निर्मल'

सम्पादक : रुपेन्द्रकुमार पगारिया

प्रकाशक : श्री वंकटलाल जी विलासकुमार सोनी मीण्डे
द्वारा–श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ
टेम्भूर्णी, जिला–शोलापुर (महाराष्ट्र)

प्रथम प्रकाशन : वसन्त पंचमी २०२८

प्रथमसंस्करण : एक हजार

मूल्य : तीन रुपये

मुद्रणव्यवस्था :

संजय साहित्य संगम

दासबिल्डिग नं. ५, आगरा-२

मुद्रक

रामजीकुमार शिवहरे,

मोहन मुद्रणालय

१३/३०६, नाई की मंडी, आगरा-२

जिनके सतत प्रेरणा प्रकाश से, मैं साधना पथ का पथिक वना हूं

जिनके अविरत उपदेश प्रवाह से, मै साहित्य क्षेत्र मे

डगमगाते कदम रख रहा हूं। उन्ही प्रेमलमूर्ति

प्रियव्याख्यानी तपस्वी श्री मगलचन्दजी म०

के चरण-कमलो मे सभक्ति सादर सर्मपित !

—भगवती मुनि 'निर्मल'

लेखक की कलम से

साहित्य समाज की सभ्यता का दर्पण है। जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नष्ट करने मे समर्थ है उसी प्रकार साहित्य अज्ञान तम को नष्ट करने मे समर्थ होता है। जिसका विचार पक्ष जितना मजबून है, वह उतना ही शक्तिशाली है। लज्जावती पौधा तो अगुली के स्पर्शन करने से लज्जित होता है, किन्तु विचारो मे वह शक्ति है कि विना स्पर्शन किये ही मानव मन आकर्पित होता है। एक दूसरे पर विचारो का ही प्रभाव पडता है। यदि आपके मन मे किसी के प्रति अच्छे विचार आये तो सामने वाला व्यक्ति भी आपके प्रति अच्छे विचार ही रखेगा। यदि आपने किसी के प्रति कुत्सित विचार किये है तो सामने वाला व्यक्ति भी कुत्सित विचार रखेगा ही। विचारो मे चुम्वकीय आकर्पण है। आपके मन मे जो विचार छिपे हैं, वही विचार आप सामने वाले व्यक्ति से सुनते ही आप कह उठते हैं कि आपने मेरे मन की वात कह दी।

सूर्य के प्रकाश की भाँति आज यह स्पष्ट होता जा रहा है

कि विचारकने जिन बातो का विचार भूतकाल मे किया था। आज वे स्पष्ट प्रत्यक्ष होती जा रही है। विचारको के विचार किसी देश विषेश की थाती नही, वे सीमातीत है न वे किसी काल मे बाँधे जा सकते है, वे कालातीत है।

अपने विचार को अच्छी तरह सरक्षण देना चाहिये, क्योकि विचार स्वर्ग मे सुने जाते है। विचाराभिव्यक्ति मानव के अन्त-द्वन्द्व की स्पष्ट झाँकी दृष्टिगोचर होती है। जिस किसी के पास अनमोल अच्छे विचार है, वह एकान्त रहते हुए भी एकान्त नही रहता, वह सदा ही उत्तम विचारो से घिरा रहता है। मानव स्वय विचार करता है तथा दूसरो के विचार सुनता भी है। विचारों के इस आदान प्रदान परम्परा ने विकास के समस्त द्वार खोले हैं। समृद्धि एवं अभिवृद्धि का पथ प्रदर्शित किया हैं। जिस प्रकार चन्दन की महक, केवडे की सुगन्ध जितना अन्दर मे रखने का प्रयत्न करेगे उतनी ही सुवास प्रस्फुटित होगी। जितना भी हम विचारों को रोकने का प्रयत्न करेंगे उतना ही विचार तीव्र गति से बाहर उद्वेलित होगा।

अपने विचारो की अभिव्यक्ति करना प्रत्येक विचारको ने अपना कर्तव्य पथ प्रकाशित किया हैं उनके विचारो की अमूल्य कृतियां संसार मे पथ के दीप का कार्य करती है। 'बिखरे पुष्प' मे भी समय-समय पर विचाराभिव्यक्त सुभाषितो के ही सचित

पुष्प है जो चतुर्दिक महापुरुषो की वाणी से एव अध्ययन, मनन से सुवासित पुष्प है।

सर्वप्रथम मैं परम श्रद्धेय सद्गुरुवर्य तपोधनी सफल प्रवक्ता प्रियव्याख्यानी मुनि श्री मगलचन्दजी म. सा. के उपकारो से इतना ऋणी हू जो कदापि उऋण नही हो सकता। आज जो कलम पकडना सीखा हूँ वह सर्व गुरुदेव के असीम उपकार का ही सुफल है।

मैं उन लेखको, विचारको एव दैनिको, मासिक पत्र-पत्रिकाओ का भी अत्यन्त आभारी हू उन लेखको की कृतियो का भी, जिनका मैंने अपनी इस कृति मे किसी न किसी प्रकार सहयोग लिया है।

श्रद्धेया स्थविरपद विभूषिता महासती श्री सज्जन कु वर जी म० सा० के उपकार को तो भूल ही नही सकता जिनके अमर उपदेश से मैं इस पथ का पथिक बना हूँ।

सम्पादक महोदय को तो धन्यवाद क्या दें, क्योंकि वे तो अपने ही हैं। इत्यलम्। सुज्ञेषु किं बहुना

जमीं फलक बनी है अपने चिराग लेकर
कह दो आसमां से अपने दिये बुझा दे॥

नान्देशमा —भगवती मुनि 'निर्मल'

जैन भवन

श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ

टेम्भूर्णी जि० शोलापुर

दानदाताओं की शुभ नामावली

साहित्य समाज का दर्पण है। जिस समाज मे अधिक साहित्य का वाचन मनन प्रकाशन होता हो, वही समाज जीवित माना जाता है। जिन महानुभावो, दानवीरो ने उस साहित्य प्रकाशन में योग्य आर्थिक, बौद्धिक सहायता दी है उनका मैं कृतज्ञ हूं, भविष्य मे भी इसी प्रकार सहायता मिले इसी भावना के साथ उनकी शुभ नामावली यहां दी जा रही है।

आपका

बकटलाल सोनी मीण्डे

मन्त्री

श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ

टेम्भूर्णी

आधार स्तम्भ

१. श्रीमान्दानवीरसेठ प्रवीणकुमार हिराचन्द जी वाटविया
वम्वई

२. ,, वकटलालजी विलामकुमार सोनी मीण्डे, टेम्भूर्णी

३. ,, प्रेमराज जी जगदीश प्रकाश वर्मा, भद्रावती

४. ,, रावतमल वनेचन्द एण्ड सन्स, शिमोगा

५. ,, मी० पृथ्वीराज जी गादिया, वैंगलोर

६. ,, गुप्तदान, वैंगलोर

७. ,, मानकचन्द जी के स्मरणार्थ,
मोहनलालजी, मोतीलालजी, मिश्रीलालजी, रमणलालजी, जयन्तिलालजी सोनी मीण्डे के परिवार से, शोलापुर

८. ,, गगास्वरूप शान्तिवाई हस्तिमल जी पुनमिया,
वम्वई

९. ,, भवरलालजी गुलावचदजी सकलेचा, वैंगलोर

स्तम्भ

१ श्रीमानदानवीरसेठ सीरेमल धूलाजी एण्ड सन्स, बाणावार
२ ,, छगनमलजी धनराजजी सुराना कडूर
३ ,, जुगराजजी गुलाबचदजी बाठिया, भद्रावती
४. ,, सौ सरदारबाई केवलचद जी बोरा, रायपुर
५ ,, समरथमलजी भवरलालजी सकलेचा, बैंगलोर
६ ,, गगास्वरूप अगछीबाई, वैंगलोर
७ ,, बशीलालजी शान्तिलालजी पोखरना, कोप्पल
८. ,, ब्रह्मानन्दजी देवराजजी शर्मा, थाणा
९ ,, ताराचन्दजी चम्पालालजी छाजेड, थाणा
१०. ,, जशराजजी जवरीलालजी गोलेच्छा, बैंगलोर
(सौ० धापुबाई के १११ उपवास के उपलक्ष मे)

□□

माननीय सस्दय

श्रीमान पुखराजजी चैनराज गादिया	शिकारपुर
,, धर्मचन्द सुभापचन्द्र वोहरा	वैंगलोर
,, एम० शकरलाल लुनावत	,,
,, मोहनलालजी इन्द्रचन्द्रजी डागा	कडूर
,, सम्पतराजजी केशरीमलजी कवाड	भद्रावती
,, केशरीमलजी भागचदजी वोहरा	वाणावार
,, नेमिचदजी पारसमलजी काढेड	वैंगलोर
,, थानमलजी पुखराजजी डगा	,,
,, मोहनलालजी मागीलालजी सिघवी	शिमोघा
,, मिरेमलजी चम्पालालजी मुथा	वम्वई
,, ख्यालीलालजी घासीरामजी जैन	पालघर
,, धनराजजी गिरेराजजी मुथा	हग्रीवोमन हल्ली
,, सौ० कमलावाई मोतीलालजी गोलेच्छा	तिरमसी
,, ,, गुलाववाई चौथमलजी वोहरा	रायपुर
,, ,, दाखीवाई अमरचदजी वोहरा	,,
,, नारायणदास लखमीचदजी मुणोत	दौण्ड
,, मिठालालजी झूम्वरलालजी मुणोत	काण्ठी
,, श्रीमती धन्नावाई मोहनलालजी खड्गाधी	आएलगाव
,, सौ० सोहनराजजी समदड़िया	वैंगलोर

श्रीमान् सोहनराजजी मेघराजजी जैन — अरसीकैरे

,, केशरीमलजी पन्नालालजी गुन्हेचा खण्डवीकर — बार्शीटाउन

,, श्रीमती पुतलाबाई अगरचदजी कंकुलोड — बार्शीटाउन

,, पुखराजजी गुलाबचन्दजी बाठिया — भद्रावती

,, चिमनलालजी गोकुलचन्दजी देरासिया की माताजी अच्छीबाई — बैंगलोर

,, पुसराजजी सुभाषचन्दजी कटारिया — इलकल

,, सुखलालजी खाटेड ब्रदर्स — कौरेगाव

,, गुप्तदान — नान्देशमा

,, — ,,

,, राजमलजी प्रेमराजजी लूंकड — बडगाव

,, मानकचन्दजी राजमलजी बाफना — बडगाव (म.)

,, भवानी टिम्बर एण्ड को० — कडुर

,, गुप्तदान — बेंगलोर

,, मदनराजजी अमृतलालजी सुराना — शिकारपुर

,, तेजराजजी मकाना — दौड बालापुर

,, मगनलालजी केशवजी भाई — बैंगलोर

,, रजनीभाई व्ही लाठिया — ,,

,, शान्तिभाई केशवजी जैन — ,,

श्रीमान्	मिश्रीमलजी वौहरा की धर्मपत्नी घीसावाई	वैंगलोर
,,	चान्दमलजी की धर्मपत्नी सहाणी वाई	,,
,,	लखमीचन्दजी वाठिया की माताजी रगुवाई	,,
,,	शान्तिमलजी मागीलाल जी वंकी	,,
,,	जवानमलजी मांगीलालजी वघाणी	,,
,,	केशरीमलजी सुजानसिंहजी वूरड	,,
,,	ए० सोहनराजजी भन्साली	,,
	श्रीमती भवरीवाई भूरीवाई जैन	,,
,,	मीठालालजी कुशलराजजी छाजेड	,,
,,	पुखराजजी ओसवाल की धर्मपत्नी राधावाई	,,
,,	गुप्तदान	
,,	हीरालालजी धोखा की धर्मपत्नी हासुवाई	,,
,,	गणेशमलजी पुसामलजी नाहर	शिकारपुर
,,	भंवरलालजी माणकचन्दजी जागड़ा	कोप्पल
,,	रामीवाई ह० हेमराजजी दानमल मेहता	,,
,,	सम्पतराजजी चोपडा की धर्मपत्नी प्यारीवाई,	रायपुर
,,	सोहनराजजी चोपडा की धर्मपत्नी वादलवाई	कोप्पल
,,	चुन्नीलालजी हिरालालजी एण्ड कं.	,,
,,	माणकचन्दजी मुथा की धर्मपत्नी सौ० उमराववाई	,,
,,	महिला समाज	रायपुर

श्रीमान देवीचन्दजी चम्पालालजी जैन	कोप्पल
गुप्तदान	बैंगलोर
„ धर्मचन्दजी गादिया	व्हेल्लुर
„ वृद्धिचन्दजी पुसालालजी रूणवाल	विजापुर
„ कान्तिलालजी अम्बालालजी रूणवाल	„
„ धौडीराम मूलचन्दजी रूणवाल	„
„ बशीलालजी मदनलालजी वेद मूथा	शोलापुर
„ शान्तिलालजी पुखराजजी मुथा	भद्रावती
„ कपूरचन्दजी पोपटलालजी जैन	कूर्डू
„ भीकनसदाजी अमृतलालजी गुगले	करमाला
„ उल्हासबाई की तरफ से ह० हरकचन्द प्रेमराज मजारी	शिन्दें
„ हीरालालजी विसनदास जी पूनमचन्दजी गुन्देचा	शिन्दें
„ विसनदासजी कनकमलजी गाधी	श्री गोन्दा
„ दगडुलालजी बबनलालजी कटारे	„
„ मगनलालजी किसनदासजी गाधी	„
„ चन्दनमलची मोतीलालजी गाधी	„
„ गुलाबचन्दजी अनिलकुमार खाटेर	शिन्दें
„ रतनलालजी अमृतलालजी पिनलें	बेलबडी
„ सूरजलालजी राजमलजी सोनी	कामरोठ

स्व. सौ कचनकुवर वाई
सुपत्री श्रीमान वच्छराज
जी सिंगवी, नादेशमा

आपका परिवार वहुत
ही धर्मप्रेमी एव उदार
हृदय का है।
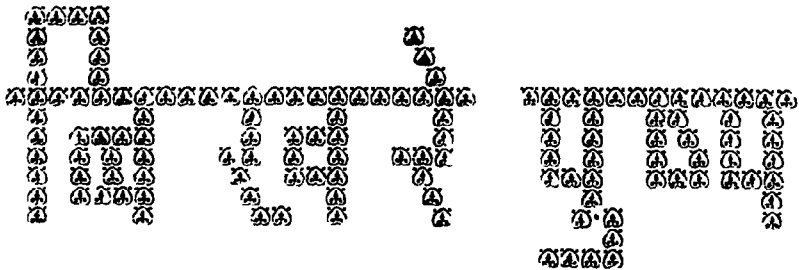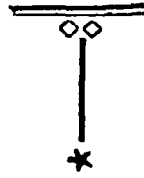
अकथा :

☐ मिथ्यादृष्टि-अज्ञानी चाहे वह साधुवेष में हों या गृहस्थ के वेष मे उसका कथन-उपदेश 'अकथा' है।

अकर्मण्य :

☐ पुरुषार्थी मनुष्य सर्वत्र भाग्य के अनुसार प्रतिष्ठा पाता है, परन्तु जो अकर्मण्य है वह सम्मान से भ्रष्ट होकर घाव पर नमक छिड़कने के समान असह्य दु:ख भोगता है।

अकर्मण्यता :

☐ अकर्मण्यता मृत्यु है।

☐ प्रकृति अपनी उन्नति और विकास में रुकना नही जानती और अपना अभिशाप प्रत्येक अकर्मण्यता पर लगाती है।

अकृतज्ञ :

☐ अकृतज्ञ मानव से एक कृतज्ञ कुत्ता अच्छा है।

अकृतज्ञता :

□अकृतज्ञता—मानवता के प्रति विश्वासघात है ।

अकेला :

□बहुत से लोग ऐसा मानते हैं—भाई ! मैं अकेला क्या कर सकता हूँ ? परन्तु उसे याद रखना चाहिए कि आकाश मण्डल मे सूर्य अकेला ही होता है । टोले तो बकरो के हुआ करते है । सिंह तो अकेला ही वनविहार करता है ।

अकेला रहे :

□यदि अपने से अधिक गुणी अथवा अपने समान गुणवान निपुण साथी न मिले तो व्यक्ति अकेला रहे, किन्तु दुर्गुणियो के और दुर्व्यसनियो के साथ न रहे ।

□पशुओ ने अकृतज्ञता मानव के लिए छोड दी है ।

अक्रोध :

□जो क्रोध करने वाले पर क्रोध नही करता, वह अपने को और दूसरे को भी महान भय से बचा लेता है । ऐसा पुरुष दोनो का चिकित्सक है ।

□कार्यदक्षता, अमर्ष (शत्रु पक्ष द्वारा तिरस्कार को सहन न कर सकने का भाव) शूरता और शीघ्रता ये सब तेज के गुण है । क्रोध के वश मे रहने वाले मनुष्य को ये गुण सुगमता से प्राप्त नही हो सकते ।

अक्लहीन :

☐पशुओ मे भैस अक्लहीन मानी जाती है। जिस व्यक्ति को हिताहित का ज्ञान नही है वह महिषासुर का अवतार माना जाता है।

अक्षयकोष :

☐ये आखे, ये हाथ, ये पैर, यह शरीर और ये प्राण धन के अक्षय कोष है, उन्हे पहचानो और परिश्रम करो। श्रम से तुच्छ मानव भी महामानव बन जाता है।

अच्छाइयां :

☐गुलाबो की वर्षा कभी नही होगी। अगर हमे अधिक गुलाबो की इच्छा है तो हमे और पौधे लगाने चाहिए।

अजागृत :

☐अजागृत आत्मा पर ही प्रकृति का अधिकार होता है।

अज्ञान :

☐स्वप्न मे देखे हुए डरावने सपनो का भय कब तक रहता है? जब तक आँख नही खुलती। अज्ञानवश होने वाली भूलो का भय कब तक है? जब तक ज्ञान प्राप्त नही होता।

☐अज्ञान सबसे बडा दु ख है। अज्ञान से भय उत्पन्न होता है, सब प्राणियो के ससार-भ्रमण का मूल कारण अज्ञान ही है।

☐अज्ञान की अवस्था मे सर्वस्व खो जाने पर भी वेदना सोई रहती है।

☐ससार मे नीति, अहष्ट वेद, शास्त्र और ब्रह्म इन सबके पडित मिल सकते है। परन्तु अपने अज्ञान को जानने वाले विरले ही होते है।

☐यदि अपने अज्ञान को मिटाना है तो ज्ञानियो से ज्ञान सीखो।

☐अशिक्षित रहने की अपेक्षा पैदा न होना या पैदा होकर के मर जाना अच्छा है, क्योकि अज्ञान विपत्तियों का मूल है।

☐अपनी विद्वत्ता पर अभिमान करना सबसे बडा अज्ञान है।

☐मूर्ख लोक ही अज्ञान के अन्धकार मे भटकते रहते है।

☐हजारों मूर्खों की संगति की अपेक्षा एक ज्ञानी का सहवास अच्छा है।

☐अज्ञान चिकनी मिट्टी के समान है। इस पर पैर रखते ही मानव फिसल जाता हैं। जो व्यक्ति अज्ञान से अपने को बचा नही सकता वह मोह माया के दलदल मे अवश्य फस जाता है।

अज्ञानता :

☐अपनी अज्ञानता का आभास ही बुद्धिमत्ता के मन्दिर का प्रथम सोपान हैं।

☐अज्ञान की सबसे बडी सम्पत्ति होती है मौन और जब वह इस रहम्य को जान जाता है, तब वह अज्ञान नही रहता।

अज्ञानी :

☐जो ज्ञान के अनुसार आचरण नही करता है, वह ज्ञानी भी वस्तुत· अज्ञानी ही है।

अज्ञानी का संसार :

□जागते हुए को रात लम्बी होती है, थके हुए को एक योजन चलना भी बहुत लम्बा होता है, वैसे ही सद्धर्म को नहीं जानने वाले अज्ञानी का संसार बहुत दीर्घ होता है।

अज्ञानी साधक :

□अन्धा कितना ही बहादुर हो, शत्रु सेना को पराजित नही कर सकता। इसी प्रकार अज्ञानी साधक भी अपने विकारो को जीत नही सकता।

अच्छी फसल :

□श्रम, विश्वास व साहस—इन तीनो से जीवन क्षेत्र मे अच्छी फसल पैदा होती है।

अच्छी बात :

□अच्छी बात कहीं से भी मिलती हो, उसे ध्यान से ग्रहण करो। मोती के कीचड मे पड जाने से मोती के मूल्य मे कभी कमी नही आ सकती।

अति :

□अति भोग से रोग, अतिलोभ से नाश और अतिहास्य से तिरस्कार होता है। अति का सदा त्याग करना चाहिए "अतिसर्वत्र वर्जयेत्।"

□अधिक हर्ष और अधिक उन्नति के बाद ही अतिदुःख और पतन की बारी आती है।

☐अति सुन्दरता के कारण सीता हरी गई, अति गर्व से रावण मारा गया। अति दान के कारण वलि को बधना पडा, अति को सव जगह छोड़ देना चाहिए।

अतिथि :

☐अतिथि समाज का एक प्रतिनिधि है। अतिथि के रूप मे समाज हम से सेवा मांग रहा है—हमारी यह भावना होनी चाहिए।

☐वह व्यक्ति घर के कीर्ति और यश को खा जाता है, जो अतिथि से पहले भोजन करता है।

☐'अतिथिदेव' का अर्थ है समाज-देवता। समाज अव्यक्त है, अतिथि व्यक्त है। अतिथि समाज की व्यक्त मूर्ति है।

अतिथि-सत्कार :

☐अतिथि के साथ सच्चे और हार्दिक स्वागत मे वह शक्ति है कि जो साधारण से साधारण भोजन को अमृत और देवताओ का भोजन बना देती है।

☐सच्ची मित्रता के नियम इस क्रम से सूचित होते है—आनेवाले का स्वागत करना, जाने वाले को हर्ष से विदा करना।

☐जो मनुष्य योग्य अतिथि का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करता है, उसके घर मे निवास करने से लक्ष्मी को आह्लाद मिलता है।

☐मैं क्षुधात्रसित था और तुमने मुझे खाद्यप्रदान किया, मैं पिपासा-कुल था और तुमने मुझे पेय प्रदान किया; मैं एक अजनबी था, तुमने मुझे आश्रय प्रदान किया।

अतिमात्रा :

☐भोग की अतिमात्रा एव वाणी का अति विलास दोनो मृत्यु के कारण है। अर्थात् दोनो के अति उपयोग से प्राणशक्ति का ह्रास होता है।

अत्याचार :

☐समस्त अत्याचार क्रूरता एव दुर्बलताओ से उत्पन्न होते है।

☐अनाचार और अत्याचार को चुपचाप सिर झुकाकर वे ही सहन करते हैं जिनमे नैतिकता और चरित्र वल का अभाव होता है।

अत्याचारी :

☐जो अत्याचारी है उनका सोते रहना अच्छा है, सच तो यह है कि उसके जीवन से उसका मरण ही अच्छा है।

☐अत्याचारी से वढकर अभागा व्यक्ति दूसरा नही, क्योकि विपत्ति के समय उसका मित्र या स्वजन कोई नही होता।

अतृप्तता :

☐पतिंगे की नक्षत्र के लिए इच्छा, रात्रि को दिवस के प्रति और अपने दुःख से एक अज्ञात सुख की कामना—यही तो जीवन की चिर अतृप्त इच्छा है।

अदृष्ट :

☐"सहज मिले सो दूध बराबर है" इस कहावत के अनुसार जो अनायास कार्य वन जाता है, वह सही होता है। वहा मनुष्य के

बुद्धिबल का कार्य न होकर अदृष्ट शक्ति का ही कार्य समझना चाहिए।

अधर्म :

☐ जैसे वृद्धावस्था सुन्दर रूप का नाश करती है, उसी प्रकार अधर्म से लक्ष्मी का नाश हो जाता है।

अधिकार :

☐ ससार की अच्छी वस्तुओं का नाश करने के लिए ही मूर्खों को अधिकार मिलता है।

☐ अधिकार जताने से अधिकार सिद्ध नही हो जाता।

☐ अधिकार विनाशकारी प्लेग के सदृश है। यह जिसे छूता है, उसे ही भ्रष्ट कर देता है।

☐ अधिकारो की भी सीमा होती है और शासन का समय ! सीमा लाघने के बाद वह अधिकार न रहकर तानाशाही बन जाता है। समय लाघने के बाद शासन अत्याचार की भयानकता बन जाता है।

☐ ससार मे सबसे बडा अधिकार सेवा और त्याग से मिलता है।

अध्ययन :

☐ जितना भी हम अध्ययन करते है, उतना ही हमको अपने अज्ञान का आभास होता जाता है।

☐ मनुष्यमात्र मे बुद्धिगत ऐसा कोई दोष नही है, जिसका प्रतिकार उचित अभ्यास के द्वारा न हो सकता हो। शारीरिक व्याधि दूर

करने के लिए जैसे अनेक प्रकार के व्यायाम है, वैसे ही मानसिक रुकावटो को दूर करने के लिए अनेक शास्त्रो का अध्ययन है।

☐मूर्ख मनुष्य अध्ययन का तिरस्कार करते है। सरल मनुष्य उसकी प्रशसा करते है और ज्ञानी पुरुष उसका जीवन निर्माण मे उपयोग करते हैं।

☐सद्ग्रन्थ इस लोक के चिन्तामणि है। उनके अध्ययन से सब कुचिन्ताएँ मिट जाती हैं। सशय पिशाच भाग जाते है और मन मे सद्भाव जाग्रत होकर परम शान्ति प्राप्त होती है।

☐पढने से सस्ता कोई मनोरजन नही है, न कोई खुशी उतनी स्थायी है।

☐पढना सब जानते है, पर क्या पढना चाहिए, यह कोई विरला ही जानता है।

☐प्रकृति की अपेक्षा अध्ययन के द्वारा अधिक व्यक्ति महान बने है।

☐अध्ययन के द्वारा ज्ञान होता है, चित्त की एकाग्रता होती है, मुमुक्षु धर्म मे स्थिर होता है और दूसरे को स्थिर करता है, तथा अनेक प्रकार के श्रुत का अध्ययन कर श्रुत-समाधि मे रत हो जाता है।

☐मुझे श्रुत का ज्ञान प्राप्त होगा, मैं एकाग्रचित्त होऊँगा, मै आत्मा को धर्म मे स्थापित करूँगा, तथा धर्म मे स्थिर होकर

दूसरे को उसमे स्थिर करूँगा"—साधक को इसलिए अध्ययन करना चाहिए।

☐हमने जो कुछ पढा है, उसपर विचार करे, उसे हजम करे और उसे अपने जीवन का अग बना ले।

अध्यात्म की ओर :

☐विज्ञान हमे गति दे सकता है दिशा व दिग्दर्शन नही कर सकता। हाथ मे अनूठी शक्ति दे सकता है, विवेक नही। दिशा-विवेक का ज्ञान लेना है तो हमे अध्यात्म की ओर प्रवृत्त होना पडेगा।

अध्यात्मवादी :

☐ज्ञानी—अध्यात्मवादी मानव को सतत जागृत रहना चाहिए क्योकि उसके व्यवहार की छाप दुनियां पर पड़ती है।

अनर्थ :

☐यौवन, धन-सपत्ति, प्रभुता और अविवेक—इनमे से प्रत्येक अनर्थ के कारण है, जहां चारो हो, वहा क्या कहना ?

अनर्थों का मूल कारण :

☐अश्रद्धा से अन्तःकरण की विवेक शक्ति नष्ट होती है और अविवेक ही सब अनर्थों का मूल कारण है।

अनासक्ति :

☐अनासक्त व्यक्ति कर्म करता हुआ भी कर्म का बन्धन नहीं करता।

अनियमितता :

☐कार्य की अधिकता से मनुष्य नही मरता, किन्तु कार्य की अनियमितता से मनुष्य मौत का शिकार हो जाता है ।

अनिर्वचनीय :

☐शब्द समूह के जाल मे सत्य का समावेश नही होने के कारण वह अनिर्वचनीय है ।

अनुभव :

☐उन्नति का श्रेष्ठ पाठ—अनुभव है ।

☐सकेतो के आधार पर हम स्थान का स्वरूप नही जान सकते, प्रत्यक्ष वतलाने पर ही जान सकते है ।

अनुमोदना :

☐जिस प्रकार तपस्वी तप के द्वारा कर्मो को धुन डालता हैं, वैसे ही तप का अनुमोदन करनेवाला भी ।

अनुवंशिक :

☐कवि की सतान कवि ही होती है, जो व्यक्ति मानवता का आदर करता है उसकी सन्तान भी मानवता की कद्रदान होती है । इन्सान की औलाद इन्सान वनेगा—कवि का यह कथन कितना सुन्दर है ।

अनुस्रोत और प्रतिस्रोत :

☐जन साधारण को अनुस्रोत मे सुख की अनुभूति होती है, किन्तु जो सुविहित साधु है, उनकी यात्रा (इन्द्रियविजय) प्रतिस्रोत

होता है। अनुस्रोत ससार है—जन्म-मरण की परम्परा है। और प्रतिस्रोत उसका उतार है—जन्म मरण का पार पाना है।

अनेकांत :

☐अनेकात एक टकसाल के समान है, जहाँ सत्य के भिन्न-भिन्न खंड एक साचे मे ढल कर पूर्ण सत्य का आकार पाते है।

अन्याय :

☐अपनी भूल पर उपेक्षा करना, या जानेदो कहकर नजर-अंदाज करना अपने साथ अपनी ही ओर से किया जाने वाला सबसे बड़ा धोखा और अन्याय है।

अन्त :

☐सभी सग्रहो का अत क्षय है, बहुत ऊँचे चढने का अन्त नीचे गिरना है। सयोग का अन्त वियोग है और जीवन का अन्त मरण है।

अन्तःकरण :

☐ईश्वर का मानव से कोमल सलाप ही अन्त.करण है।

☐मैले शीशे मे सूर्य की किरणो का प्रतिबिम्ब नही पडता। उसी प्रकार जिनका अन्त करण मलिन और अपवित्र है, उनके हृदय मे ईश्वर के प्रकाश का प्रतिबिम्ब नही पड सकता।

☐मानव का अन्त.करण ही ईश्वर की वाणी है।

☐कायरता पूछती है—क्या यह भय रहित है? औचित्य पूछता

है—क्या यह व्यावहारिक है? अहकार पूछता है—क्या यह लोक-प्रिय है ? परन्तु अन्त करण पूछता है—क्या यह न्यायोचित है ?
□अन्त.करण न्याय का कक्ष है।

□अत करण जब प्रेमानुभूति से प्लावित हो जाता है, तभी जीवन की गति सरल बन जाती है।

□जैसे अस्थिर जल मे प्रतिबिम्ब दिखलाई नही पडता, उसी प्रकार मलिन और अस्थिर चित्त मे परमात्मा का प्रतिबिम्ब नही पडता।

अन्त:करण शुद्धि

□जैसे कपडे को साफ करने के लिए साबुन, सोडा आदि अनेक वस्तुएँ है, इसी प्रकार अन्त.करण को शुद्ध करने के लिए कर्म, भक्ति, ज्ञान, जप, तप आदि अनेक साधन है।

□केवल अनासक्त कर्मयोग की साधना द्वारा अत करण की शुद्धि हो कर अपने आप ही परमात्मा के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान हो जाता है।

अन्तर :

□शक्ति और भोग की अनुकूलता होने पर भी उसका त्याग करने वाला तथा उसके अभाव मे त्याग करने वाले मे महान अन्तर है।

□ज्ञान पूर्वक की गई तपस्या मे और अन्ध परम्परा से गतानु-

शतिक से की गई तपस्या मे जमीन और आसमान जितना अन्तर है।

□एक मकान धूल से भरा है तो दूसरा शक्कर से। अवस्था दोनो की समान है। जगह दोनो ने घेर रखी है। परन्तु एक की इज्जत है तो दूसरे की बेइज्जत। मानव के मन मे सद्गुण रूपी शक्कर भी है तो दुर्गुणरूपी धूल भी। किन्तु दोनो का परिवेष्टन दुनियाँ की नजरो मे चढने गिरने का कारण बन जाता है।

□बुद्धिमान बोलने के पहले तोलता है। मूर्ख बोलने के बाद।

अन्तर की पहचान :

□मनुष्य और पशु मे क्या अन्तर है? इसका सम्पूर्ण विचार कर जो अपने आप को श्रेष्ठ बनाता है, वह श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करता है।

अन्तर दीप :

□अपने अन्तर मे दीप प्रज्वलित करो, सारा संसार तुम्हारे प्रकाश से प्रकाशित होगा।

अन्तरअवलोकन :

□जरा अन्तरअवलोकन करोगे तो तुम्हारी आत्मा मे ही अखूट खजाना नजर आयेगा।

अन्धकार :

□अरिहंत का वियोग होने पर, अरिहंत प्रणीत धर्म का विच्छेद होने पर, चौदहपूर्व का ज्ञान विच्छेद होने पर, भाव से अन्धकार

होता है। तथा अग्नि का नाश होने पर द्रव्य में अन्धकार होता है।

आरोह तमसो ज्योतिः—

☐ अन्धकार से निकल कर प्रकाश की ओर बढ़ो।

☐ जुगनू तभी चमकता है जब तक उड़ता है, यही हाल मन का है। जब हम रुक जाते हैं तो अन्धकार में पड़ जाते हैं।

तमसो मा ज्योतिर्गमयः—

☐ मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।

अन्धकार और अहंकार :

☐ जैसे अन्धकार में हमें कोई वस्तु दृष्टिगोचर नहीं होती, वैसे अहंकार में मानव को हिताहित का पथ दृष्टि गोचर नहीं होता।

अन्धकार और प्रकाश :

☐ राग अन्धकार है और त्याग प्रकाश है।

अन्धा :

☐ अन्धा वह नहीं है, जिसकी आँखे फूट गई है, वरन् वह है जो अपने दोष छिपाता है।

☐ जन्म से अन्धे नहीं देखते, काम में जो अन्धा हो रहा है उसको सूझता नहीं। मदोन्मत्त किसी को देखते नहीं, स्वार्थी मनुष्य दोषों को नहीं देखता।

अन्धापन :

☐अन्धकार प्रकाश की ओर चलता है, परन्तु अन्धापन मृत्यु की ओर ।

अन्नदान :

☐भूख से पीडित मनुष्य को भोजन के लिए अन्न अवश्य देना चाहिए, उसको देने से महान पुण्य होता है तथा दाता मनुष्य सदा अमृत का पान करता हैं ।

अन्याय :

☐अत्याचार सहन करने की अपेक्षा अत्याचारी बनना अधिक निन्दनीय है ।

अन्यायी :

☐अन्यायी और अत्याचारी की करतूते मनुष्यता के नाम खुली चुनौती है, जिसे वीर पुरुषो को स्वीकार करना ही चाहिए ।

अपनत्व :

☐सबसे बड़ा भार अपनत्व का होता है, जहाॅ अपनत्व है वही चिन्ता और दुःख है। सागर और गागर का पानी इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है-।

अपना और पराया :

☐ससार मे अपना-पराया कोई भी नहीं । जो किसी को अपना समझता हैं, वही अपना है, और जो पराया समझता हैं, वह अपना होने पर भी पराया है ।

अपनी देखें :

☐ अपने पैरों में काटा चुभा तो सारी पृथ्वी को चमडे से मढने की अपेक्षा अपने पावों में जूता पहन लेना श्रेष्ठ है। सारा ससार सत्यवादी बने यह हमारे वश की बात नही है। हम सत्य-वादी बने यह हो सकता है। हम ससार की पीडा मे निर्बल बन रहे है, कितनी मूर्खता भरी बात है ?

अपनी पहचान :

☐ जिसने आत्मा को जान लिया उसने परमात्मा को जान लिया। आत्मज्ञान ही परमात्म ज्ञान है। आगम वाक्य है—

"जे एग जाणइ, से सव्व जाणइ"

—जो एक को जानता है वह सबको जानता है। "यस्मिन् विज्ञाते सर्वमिद विज्ञात भवति" जिसको जान लेने पर सब कुछ जान लिया जाता है।

अपनी बड़ाई :

☐ अपने मुँह मियामिट्ठू बनना निम्नस्तर के व्यक्तियों का काम है।

अपने आप बढ जाता है :

☐ जल मे तैल स्वभाव से फैल जाता है, दुष्ट मनुष्य के पास गई हुई गुप्तबात अपने आप फैल जाती है। सुपात्र को दिया हुआ दान

स्वय वृद्धि को प्राप्त होता है और बुद्धिमानों का शास्त्रज्ञान अपने आप बढता जाता है ।

अपने आप को सुधारो :

☐यदि तुम चाहते हो कि ससार सुधर जाय, तो तुम संसार को सुधारने के फेर में न पडो । इसका सबसे सरल उपाय तो यही है कि तुम अपने आप को सुधारो ।

अपमान :

☐अपमान का भय कानून के भय से किसी तरह कम क्रियाशील नही होता ।

☐हम दूसरो द्वारा अपमानित होने पर बहुधा कुपित हो जाते हैं, किन्तु अपने द्वारा होने पर नही । दूसरो द्वारा अपमानित होना उतना हानिप्रद नही है, जितना कि अपने द्वारा ।

अपराध :

☐अपराधो का सहना भी अपराध है, अन्याय करने वालो की उपेक्षा करना अन्याय पीडितो पर अत्याचार करना है ।

☐सबसे पहला अपराधी वह है जो अपराध करने देता है, दूसरा अपराधी वह है जो अपराध करता है ।

अपराधी :

☐अन्याय सहलेने वाला भी अपराधी होता है । यदि वह न सहा जाय तो फिर कोई किसी से अन्याय पूर्ण व्यवहार कर ही नही सकेगा ।

☐अपराधी अपने अपराध को छिपाने का कितना ही प्रयत्न क्यों नहीं करे, किन्तु एक न एक दिन उसका अपराध प्रकट हो ही जायगा।

अपराधों को भूलो :

☐किसी के अपराध को याद मत करो। इसमें हमारा ही मन दूषित हो जाता है। अपराधी का इसमें कुछ भी अनिष्ट नहीं होता। जो दूसरे के अपराध को भूलना जानते हैं, वे महान होते हैं, शत्रु को मित्र बनाने की कला में कुशल होते हैं।

☐कोई लेन के बाद भी कृतघ्न होता है तो यह उसका अपराध है, किन्तु यदि मैं नहीं देता हूँ तो यह मेरा अपराध है।

अपरिग्रह :

☐सब जीवों के त्राता भ० महावीर ने वस्त्र आदि को परिग्रह नहीं कहा है, मूर्छा को परिग्रह कहा है।

अप्रमाद :

☐मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, और विकथा यह पांच प्रकार का प्रमाद है। इससे निवृत्त होना ही अप्रमाद है।

अबन्ध :

☐जो सब जीवों को आत्मवत् मानता है, जो सब जीवों को सम्यक्‌दृष्टि से देखता है, जो आश्रव का निरोध कर चुका है और जो दान्त है, उसको पाप-कर्म का बन्धन नहीं होता।

अभय :

☐धन से, परिवार से, शरीर से अपनापन हटा दे तो भय कहाँ ? **"तेन त्यक्तेन भुञ्जीथ"**—यह भय की रामबाण औषधि है। धन, सम्पत्ति पर से ममत्व हटाना ही अपने आपको भय से मुक्त करना है।

अभयदान :

☐अभय का अर्थ है बाहरी भय से मुक्ति। मृत्यु का भय, धन दौलत के अपहरण का भय, आजीविका का भय, रोग का भय, शस्त्रप्रहार का भय—इन आत्मघातक भयों से मुक्ति दिलाना ही अभयदान है।

अभिमान :

☐कोयल मधुर आम्ररस का पान करके भी अभिमान नहीं करती किन्तु मेंढक कीचड का पानी पीकर भी टर्राने लगता है।

☐किसी अवस्था में अपनी शक्ति पर अभिमान मत कर, क्योंकि संसार इन्द्र धनुष्य की तरह अपना रंग बदलता रहता है।

☐गर्व ने देवदूतों को भी नष्ट कर दिया।

अभेदद्रष्टा :

☐जिसकी दृष्टि शरीर और इन्द्रिय से परे आत्मा को परखना जानती है, वह अभेदद्रष्टा होता है।

अभ्युदय :

☐जीवन के भाव, जब अपनी शुभ और अशुभ-दोनों वृत्तियों से

ऊपर उठकर शुद्धभाव मे परिणति पा लेते है, वही से वीतरागता का अभ्युदय होता है ।

अमर

☐नीति-परायण व्यक्ति सदा अमर रहता है । और अनीति का आचरण करने वाला जीवित भी मरा हुआ है ।

अमरत्व :

☐मनुष्य इसी जन्म मे परिपूर्ण हो सकता है । सर्वसग परित्याग के योग से ही मनुप्य अमरत्व तक पहुँच सकता है ।

☐अमरत्व की भावना ही मनुष्य के जीवन को सौंदर्य तथा माधुर्य से पूर्ण बनाती है । यह भौतिक स्वर्ग या उस पार का बहिस्त, एक ही भावना है । चिर-सुख की इच्छा ही उनमे पाई जाती है ।

☐विना अमरत्व की भावना से प्रेरित हुए आज तक किसी ने अपने देश के लिए धर्म के लिए अपनी प्राणो का उत्सर्ग नही किया ।

अमीर और फकीर :

☐सब से बडा अमीर वह है जो गरीबो का दु ख दूर करता है और सबसे बडा फकीर वह है जो अपने गुजारे के लिए अमीरो का मुँह नही देखता ।

अमृत :

☐राग, द्वेप और मोह का क्षय होना ही अमृत है ।

☐वृद्धो या बडो की वाणी मे शास्त्र और अनुभव का मिश्रण होता है। इन दोनो का मिश्रण ही अमृत है।

अमृत की अपेक्षा अनुभव श्रेष्ठ है.

☐सेर अमृत की अपेक्षा अनुभव का एक कण श्रेष्ठ है। अमृत मात्र एक व्यक्ति के जीवन की रक्षा कर सकता है, किन्तु अनुभव का एक कण लाखो व्यक्तियो को सुखी बना सकता है।

अमोघ औषधि

☐दु ख को दूर करने की एक ही अमोघ औपधि है-मन से दु खो की चिन्ता न करना।

अवलोकनीय :

☐रूप को नही, गुण को देखना चाहिए। कुल को नही, शील को देखना चाहिए। अध्ययन को नही, प्रतिभा को देखना चाहिए। भापण को नही, आचरण को देखना चाहिए। बाह्यतप को नही, सहनशीलता को देखना चाहिए। धर्म की वाह्य क्रिया को नही, दया को देखना चाहिए।

अवश्यंभावी :

☐यदि मानव सिह के सामने जायेगा तो अवश्य ही कालकवलित होगा। विपय, कपाय, पाप, कल्मपरूप सिह के सामने जायेगा तो आत्मा का पतन अवश्यभावी है।

अवसर :

☐दीप के वुझ जाने पर तैल का दान किस काम का ?

□वस्तुस्थिति को जानते हुए भी विना समय देखे वोलना मूर्खता है । अवसर आने पर भी गम्भीरता रखना वुद्धिमत्ता है ।

□वुराई करने के अवसर तो दिन मे सौ वार आते है, पर भलाई का अवसर वर्ष मे एक वार ही आता है ।

□सफलता को खो देने का निश्चित तरीका अवसर को खो देना है ।

□अवसर के डके दुवारा नही वजते ।

□कई लोग असाधारण अवसरो की वाट देखा करते है, किन्तु वास्तव मे कोई भी अवसर छोटा या वडा नही है । छोटे से छोटे अवसर का उपयोग करने से, अपनी वुद्धि को उसमे भिडा देने से वही छोटा अवसर वडा हो जाता है ।

□ऐसा कोई भी व्यक्ति ससार मे नही है, जिसके पास एक वार भाग्योदय का अवसर न आता हो, परन्तु जव वह देखता है कि वह व्यक्ति उसका स्वागत करने के लिए तैयार नही है, तो वह उलटे पैरो लौट जाता है ।

□आज का अवसर घूम कर खो दो, कल भी वही वात होगी और फिर अधिक सुस्ती आयेगी ।

अविनीत :

□जिस प्रकार सडे कानो वाली कुतिया सर्वत्र अनादर व दुत्कार को प्राप्त होती है । उसी प्रकार अविनयी पुरुष सर्वत्र अनादर व तिरस्कार को प्राप्त होते है ।

अविरोधी

☐अपनी अपनी भूमिका के योग्य विहित अनुष्ठानरूप धर्म, स्वच्छ आशय से प्रयुक्त अर्थ, विस्रम्भयुक्त—मर्यादानुकूल वैवाहिक नियत्रण से स्वीकृत काम, जिनवाणी के अनुसार ये परस्पर अविरोधी है। अर्थात् इस प्रकार—धर्म, अर्थ और काम मे कोई विरोध नही है।

अविश्वसनीय

☐काया, माया और छाया ये तीनो अविश्वसनीय है।

अविश्वास :

☐अविश्वास धीमी आत्महत्या है।

☐अविश्वासी आदमी ईश्वर के पास मन और प्राण को गिरवी रखता है और कुछ दिनो के बाद लौटा लेता है, किन्तु पूर्ण विश्वासी अपने को सम्पूर्ण रूप से ईश्वर के हवाले कर देता है।

असन्तोष .

☐असन्तुष्ट व्यक्ति के लिए सभी कर्तव्य नीरस होते है। उसे तो कभी भी किसी वस्तु से सन्तोप नही होता, फलस्वरूप उसका जीवन असफल होना स्वाभाविक है।

असम्भव :

☐हर अच्छा काम पहले असम्भव लगता है।

असत्य

☐असत्य लम्बे समय तक नही चल सकता। जब तक दीप प्रकाशित नही होता तब तक ही अन्धकार का साम्राज्य रहता है।

☐थोडा सा असत्य भी जीवन को बरबाद कर देता है। जैसे दूध मे जहर की एक बूद।

☐जो जान-बूझकर झूठ बोलने मे लज्जा का अनुभव नही करता उसके लिए कोई भी पाप अकरणीय नही।

☐क्रोध से क्षुब्ध हुए व्यक्ति का सत्य भाषण भी असत्य ही है।

☐दो काली वस्तुओ से एक सफेद वस्तु नही बन सकती। निंदा का जवाब निन्दा से, गाली का जवाब गाली से या हिंसा का जवाब हिंसा से देने से उनकी वृद्धि होती है।

☐असत्य भाषण करने वाले को यह दण्ड नही कि लोग उसकी बातो का विश्वास न करे, किन्तु उसका यही दण्ड उसे मिलता है कि वह स्वय किसी का विश्वास नही करता।

असत्यवादी

☐असत्यवादी हमेशा मित्र, यश व पुण्य से वचित रहता है।

असत्याचरण

☐प्रत्येक असत्याचरण समाज के स्वास्थ्य पर आघात है।

असफलता

☐असफलता निराशा का सूत्र कभी नही है, अपितु वह तो नई प्रेरणा है।

□असफलता का प्रधान कारण प्राय धनाभाव नहीं, अपितु शक्ति सामर्थ्य और आत्मबल का अभाव होता है।

असम्भव :

□असम्भव की कल्पना मत करो। पत्थर से पानी निचोड़ने की कल्पना मूर्खता है।

असाध्यरोग :

□जो अपनी मूर्खता को जानता है, वह कभी न कभी समय आने पर धीरे-धीरे सुधर जाता है। परन्तु जो मूर्ख अपने को बुद्धिमान समझता है उसका रोग असाध्य है।

अस्पृश्यता :

□मनुष्य के साथ प्रेम करने का ही पाठ शास्त्रों ने बताया है घृणा करना तो पाप है। छुआछूत धर्म के लिए कलंक है।

□मनुष्य जन्म से ही न तो मस्तक पर तिलक लगाकर आता है, न यज्ञोपवीत लेकर। जो सत्कार्य करता है वह द्विज है, और जो कुकर्म करता है वह नीच।

□अस्पृश्यता भारतवासियों पर कलंक है। इस कलंक को हमें 'सत्वेषु मैत्री' की भावना से धो डालना चाहिए।

□शरीर किसी का भी हो, स्पष्टतः गन्दगी की गठरी है, और आत्मा तो सर्वत्र एकसा शुद्ध व चिन्मय है। ऐसी अवस्था में अस्पृश्यता कैसी और किसके लिए ?

अहं :

☐मैं कौन हूँ ? इसका तूने विचार किया ? मैं आत्मस्वरूप ईश्वरीय तेज मे परिपूर्ण अपने आप मे स्वय अपना भाग्य विधाता हूँ। मैं किसी दूसरे के हाथ का खिलौना नही बन सकता। अपने आप मे मैं पूर्ण हूँ।

अहम्

☐ईश्वर और हमारे बीच मात्र ढाई अक्षर का ही अन्तर है। इन ढाई अक्षरो की यदि पहचान दू तो वह है 'अहम्'।

अहकार .

☐मनुष्य जितना छोटा होता है उसका अहकार उतना ही बडा होता है।

☐दम्भ का अन्त सदैव अहकार मे होता है और अहकारी आत्मा सदैव पतित होती है।

☐नाश के पूर्व व्यक्ति अहकारी हो जाता है, किंतु सम्मान सदैव व्यक्ति को नम्रता प्रदान करता है।

☐अहकार को छोडने वाला व्यक्ति ही मोक्ष सुख को प्राप्त कर सकता है।

☐जहाँ सुगन्ध है वहाँ दुर्गन्ध नही रह सकती। जहाँ पुण्य है वहाँ पाप नही रह सकता। जिस हृदय मे प्रभु का निवास है वहाँ अहकार नही रह सकता।

□अहकार रूपी ज्वर से पीडित व्यक्ति को हितरूपी मधुर भोजन कडवा लगता है।

अहंकारी

□अहकारी का अहकार सदा स्थायी नही रहता। उसका धन, यौवन, रूप, यश और अधिकार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

अहिंसा

□अहिसा, अपरिग्रह की माता है। जिस अहिसा की साधना से अपरिग्रह भाव का जन्म नही होता, जनता का शोपण बन्द नही होता, वह अहिसा वन्ध्या है।

□जो निज के दु:ख की तरह पर के दु:ख की अनुभूति करता है, निज के सुख से पर के सुख की तुलना करता है, जो समझता है, जानता है कि जैसे मुझे सुख-दु.ख होता है, वैसे ही अन्य को भी होता है, वही धर्म को जानता है।

□सुख देने वाला सुखी होता है, दुख देने वाला दु.खी। जीव की हिसा न करना ही श्रेष्ठ धर्म और तप है।

□सभी जीव जीना चाहते है मरना नही। इसलिए प्राण-वध को भयानक जानकर साधक उसका वर्जन करते है।

○○

आ
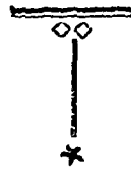
आचरण :

☐ दर्शनशास्त्र के दस ग्रन्थ लिखना आसान है, एक सिद्धान्त पर आचरण करना मुश्किल है।

☐ उदेशक श्रोता को जन-कल्याण-कारक, आत्मोद्धारक मार्ग बतला सकते हैं। विघ्न बतला कर बचने के उपाय भी बतला सकते है किन्तु स्वय तो चल नही सकते। मार्गप्रदर्शक पथिक को घुमावदार कटकाकीर्ण राजमार्ग सकेतो से बतला देते हैं किन्तु चलना तो पथिको को ही पडेगा। पथप्रदर्शक को नही।

☐ मुट्ठी मे वन्द मिश्री की डली से मिठास न देने की शिकायत नही कर सकते, हाँ मुँह मे डालने पर यदि उसमे मिठास न आये तो उसकी शिकायत ठीक है धर्म के सिद्धान्तो को पुस्तक मे वन्द

मत रखिये । उसे आचरण में लाईये । आचरण में लाने पर भी यदि धर्म फल नही देता है तो उसकी शिकायत उचित है ।

□पवित्र महापुरुषो के आदर्श जीवन को सामने रख कर अपने मन, वचन और शरीर को उनके अनुसार चलने की आदत डालनी चाहिए ।

□उच्च विचार यदि कार्य मे परिणत हो जाते है तो वे स्वर्ण बरसाने वाले बादल की तरह उपयोगी है । यदि विचार ,विचार ही रह जाते है तो वे सफेद बादल की तरह निरर्थक है ।

□मार्ग दिखलाना दीपक का कार्य है, लेकिन उस पर चलना मानव का कर्तव्य है । सही मार्ग दिखलाना गुरु का कर्तव्य है, लेकिन उसे अमल मे लाना व्यक्ति का कर्तव्य है ।

□जो सबके लिए हितकर, सुखकर व कल्याणप्रद हो, उसी का आचरण करना चाहिए ।

□सत्य व प्रिय बोलो, असत्य प्रिय मत बोलो ! किसी के साथ वैर या शुष्कविवाद मत करो !

□स्वजन से विरोध, बलवान से स्पर्धा, स्त्री, बालक, वृद्ध तथा मूर्ख से विवाद मत करो ।

□क्रोध को प्रेम से जीतो, बुराई को भलाई से जीतो, लोभ को सन्तोष से व असत्य को सत्य से जीतो ।

□दया के छोटे-छोटे कार्य, प्रेम के जरा-जरा से शब्द हमारे जीवन को स्वर्गीय बना देते है ।

☐आपत्तिग्रस्त कायर अपने भाग्य को दोष देता है। किंतु अपने पूर्व-कृत दुष्कर्मों को भूल जाता है।

आघात :

☐किसी भी तलवार का आघात इतना तीव्र नही होता जितना कि कर्कश जिह्वा का।

आत्मा :

☐ज्ञान का स्वामी दिव्य आत्मा ही विश्व का सम्राट् है।

आगे बढ़ो

☐फूल चुनकर इकट्ठा करने के लिए मत ठहरो। आगे बढे चलो, तुम्हारे पथ मे निरन्तर फूल खिलते ही रहेगे।

आगे की ओर देखो

☐मेरी राय मानो, अपनी नाक के आगे न देखा करो। तुम्हे हमेशा मालूम होता रहेगा कि उससे आगे भी कुछ है और वह ज्ञान तुम्हे आशा और आनन्द से मस्त रखेगा।

आग्रह :

☐स्वमति की जगह सुमति, तथा स्वपक्ष के स्थान पर सुपक्ष का आग्रह होना चाहिए।

आगम का सार .

☐जैनशास्त्रो मे सिर्फ दो ही बात बताई गई है--मार्ग और मार्ग का फल।

आकांक्षा :

□यदि तुम सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने के आकाक्षी हो, तो सबसे नीचे से चढना शुरू करो।

□जो कुछ तुम इच्छा करते हो, यदि तुम वह कर नही सकते तो वही इच्छा करो जो तुम कर सकते हो।

आँख :

□आखे शरीर का दीपक है। इसलिए यदि तुम्हारी आखे स्थिर निर्विकार है तो तुम्हारा सारा शरीर प्रकाश से जगमगा उठेगा। यदि तुम्हारी आखो मे बुराई भरी है तो निश्चित तुम्हारे जीवन मे अन्धकार का साम्राज्य फैल जायगा।

□अकेली आख यह बतला सकती है कि हृदय मे घृणा है या प्रेम।

आचार और विचार :

□आचार से विचार बनता है और विचार से आचार बनता है। दोनो मे अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

आचार-समाधि :

□मुनि जिस श्रद्धा से उत्तम प्रव्रज्या-दीक्षा के लिए घर से निकला उसी का अनुपालन करे। आचार सम्मत गुणो की आराधना मे मन को बनाए रखे।

आचार्य :

□जो आचरण योग्य नियम बनाता है, वह आचार्य है।

☐जिस प्रकार दीपक स्वय प्रकाशमान होता हुआ अपने स्पर्श से अन्य सैकडो दीपक जला देता है, उसी प्रकार आचार्य स्वय ज्योति से प्रकाशित होते है एव दूसरो को प्रकाशमान करते है ।

आजादी :

☐आजादी की तडफ आत्मा का सगीत है ।

☐रत्नजटित स्वर्ण के पिजरे मे रहने वाला और विविध भोजन खाने वाला तोता आजादी मे वन के सूखे पत्ते खाना ज्यादा पसन्द करता है ।

मिले खुश्क कर रोटी तो आजाद रहकर।
बेखौफ जिल्लत हलवे से बेहतर ।

☐नीतिज्ञ व्यक्ति ही आजादी को दिल से चाहते है, शेष लोग स्वतन्त्रता नही, स्वच्छन्दता चाहते है ।

☐नेक आदमी ही आजादी को दिल से प्यार करते है; बाकी लोग स्वतन्त्रता नही, स्वच्छन्दता चाहते है ।

आजाद :

☐आजाद वही है, जिसने आत्मा को जीत लिया है शेष सब परतन्त्र है ।

☐गुलामी के हजारो वर्ष की अपेक्षा आजादी का एक क्षण अधिक आनददायक है ।

आज्ञा :

☐ महापुरुषों की आज्ञा मे तर्क वितर्क करने जैसी कोई वस्तु नहीं होती ।

आत्म-ज्ञान :

☐ मनुष्य के व्यक्तित्व का सबसे बडा घटक तत्त्व है अपनी शक्तियों की जानकारी व उसमे दृढ आस्था । अपनी शक्ति की पूंजी को सजोइए व उसमें अपना व्यक्तित्व डालकर ससार को प्रकाशित कीजिए ।

आत्मद्रष्टा :

☐ आत्मद्रष्टा विचार करता है—"मैं तो शुद्ध ज्ञान, दर्शनस्वरूप, सदा काल अमूर्त सत्‌चित् आनन्दस्वरूप एक शुद्ध शाश्वत तत्त्व हूँ परमाणु मात्र भी अन्य द्रव्य मेरा नही है ।"

आत्मप्रकाश :

☐ हे मानव ! आत्मदीप (आप ही अपना प्रकाश) और स्वावलम्बी होकर विचरण कर, किसी दूसरे के भरोसे मत रह ।

आत्म-प्रशंसा :

☐ जिन्हे कही से प्रशसा नही मिलती वे आत्मप्रशसा करते है ।

आत्मनिरीक्षण :

☐ केवल दूसरो के द्वारा अपनी निन्दा सुन कर मनुष्य अपने को निन्दित न समझे, वह स्वय आत्मनिरीक्षण करे । लोक तो निरकुश होते है, जो चाहते कह देते है ।

□क्या मेरे प्रमाद (दोष-सेवन) को कोई दूसरा देखता है अथवा अपनी भूल को मैं स्वय देख लेता हूँ ? वह कौनसी स्खलना है जिसे मे नही छोड रहा हू ? इसप्रकार सम्यक् प्रकार से आत्म-निरीक्षण करता हुआ साधक अनागत का प्रतिवन्ध न करे-असयम मे न वधे, फल की कामना न करे ।

□दूसरे की त्रुटियो को नही देखना चाहिए, उसके कृत्य, अकृत्य के फेर मे नही पडना चाहिए । अपनी ही त्रुटियो का तथा कृत्य अकृत्य का विचार करना चाहिए ।

आत्मरक्षा :

□जान मे, अजान मे कोई अधर्म कार्य कर वैठे तो अपनी आत्मा को इससे तुरन्त हटाले, फिर दूसरी बार वह कार्य न करे ।

□सब इन्द्रियो को सुसमाहित कर आत्मा की सतत रक्षा करनी चाहिए । अरक्षित आत्मा जाति-पथ (जन्म-मरण) को प्राप्त होता है और सुरक्षित आत्मा सब दु खो से मुक्त होता है ।

आत्मविश्वास :

□आत्मविश्वास सफलता का मुख्य रहस्य है ।

□आत्मविश्वास ही अशक्य को शक्य वना सकता है ।

□आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसयम केवल यही तीन तत्त्व जीवन को परम शक्तिसम्पन्न वना देते है ।

□आत्मविश्वास सिद्धि का प्रथम सोपान है ।

आत्म-शक्ति :

☐प्राणी जहाँ-जहा पर जो-जो भी प्राप्त करता है वह सभी ही अपनी आत्म शक्ति से लाभ करता है। किसी अन्य से उसे कुछ नही मिलता।

आत्मसम्मान :

☐आत्मसम्मान की रक्षा हमारा सबसे पहला धर्म है। आत्मा की हत्या करके अगर स्वर्ग भी मिले तो वह नरक के समान है।

आत्म-स्वरूपः

☐ शुद्धोसि-बुद्धोसि निरजनोसि,
ससार-माया-परिवर्जितोसि।

—वत्स ! तू शुद्ध है, बुद्ध है और निरजनस्वरूप है। तू इस ससार की माया से बिलकुल दूर है। यह भारतीय सस्कृति का मूल नारा है।

आत्महत्या :

☐आत्महत्या अनुचित है, क्योंकि निरपराध शरीर को मार डालने से क्या लाभ ? अपराध तो हमारे मन ने किया है, क्यों नही उसे मार डाला जाय। अपराध मन करे और दण्ड शरीर को दे यह कहाँ का न्याय ?

आत्मा :

☐आत्मा ही अपना स्वर्ग और आत्मा ही अपना नरक है।

□ आत्मा ही मेरा बन्धु है और आत्मा ही मेरा शत्रु है।

—अप्पा मित्तममित्त च।

□ आत्मा ही सुख-दुःख का कर्त्ता और भोक्ता है। सदाचार मे प्रवृत्त आत्मा मित्र तुल्य है, और दुराचार मे प्रवृत्त होने पर वही शत्रु तुल्य है।

—अप्पा कत्ता विकत्ता य दुहाणय सुहाणय।

□ जो आत्मा है वह विज्ञाता है और जो विज्ञाता है वह आत्मा ही है।

—आया नाणे विन्नाणे च।

□ मित्र, शत्रु, मार्गप्रदर्शक, बुद्धिमान कोई और नही, वह तो तुम्हारी आत्मा ही है जो सतत तुम्हारे साथ रहती है।

□ आत्मा तो स्वय शुद्ध, बुद्ध, सच्चिदानन्द ज्ञान, दर्शन चारित्र-मय है, जीव के समान जीव ही हो सकता है, जड पदार्थ नही।

—आत्मा वाऽरे द्रष्टव्य।
श्रोतव्यो, मन्तव्यो, निदिध्यासितव्य।

□ आत्मा का ही दर्शन करना चाहिए, आत्मा के सम्बन्ध मे सुनना चाहिए, मनन चिन्तन करना चाहिए, और आत्मा का ही निदिध्यासन-ध्यान करना चाहिए।

□ आत्मा तीन प्रकार का है—परमात्मा, अन्तरात्मा, और वहिरात्मा।

☐इन्द्रियोमे आसक्त बहिरात्मा है, और अन्तरग मे आत्मानुभव रूप आत्मसकल्प अन्तरात्मा, आत्मा की परम शुद्ध अवस्था परमात्मा है ।

आत्मा और सोना

☐सोना और मिट्टी, दूध और मक्खन साथ रहते है, वैसे ही आत्मा अनादिकाल से देह के साथ रहता आया है । सोना और मिट्टी एक नही, किन्तु भिन्न-भिन्न है, वैसे ही आत्मा देह से भिन्न है । मिट्टी से स्वर्ण अलग किया जा सकता है, वैसे ही आत्मा को देह से अलग किया जा सकता है । देह विमुक्ति ही आत्मा की विमुक्ति है ।

आत्मानुशासन :

☐मैं एक हूँ, दूसरा मेरा कोई नही है, मैं भी अदृश्यमान किसी अन्य का नहीं हूं । इस प्रकार अदीन मन से आत्मा का अनुशासन करो ।

आत्मा से परमात्मा :

☐पूजा, अर्चना, तीर्थस्थान, तीर्थजल प्राशन से आत्मा अमर नही बनता, किन्तु वासना पर विजय पाने से ही आत्मा परमात्मा वनता है ।

आत्मीयता :

☐आत्मीयता से भरी एक दृष्टि पीडित हृदय के लिए कुबेर के कोप से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

आदत :

□लोमड़ी अपनी खाल बदलती है, आदते नही ।

□बुरी आदतो से हमारी क्षुद्रता का आभास मिलता है ।

□आदतो को यदि रोका न जाए तो वे शीघ्र ही लत बन जाती है ।

आदमी :

□जो कभी गिरा नही, वह आदमी नही, जो गिरकर उठा नही, वह भी आदमी नही ।

आदर्श-जीवन :

□ जिन्दगी ऐसी बना जिन्दा रहे दिलशाद तू ।
जब न हो दुनिया मे तो दुनिया को आये याद तू ।

आदर्श-दान :

□बिना दिखावट के उदारता और करुणा की भावना से अन्त - करण पूर्वक दिया गया अल्पदान भी महालाभ का कारण होता है ।

आदर्श-रहित .

□आदर्शविहीन मानव मल्लाह रहित जहाज है ।

आधार :

□समुद्र मे से उत्पन्न हुए बुलबुलो का और पर्वत जितने बड़े तरगो का आधार तो महासागर स्वय ही है ।

आधारभूत तत्त्व :

☐शान्ति प्राप्त करने के लिए हमे धन दौलत को या सत्ता को प्राप्त करने की आवश्यकता नही। शान्ति प्राप्त करने के लिए हमे सयम और सन्तोप की आवश्यकता है। क्योकि शान्ति प्राप्त करने के ये ही आधारभूत तत्त्व है।

आधुनिक शिक्षा :

☐आधुनिक शिक्षा और सस्कृति ससार मे सुशिक्षित समझे जाने वाले को भौतिक सुख की लालसा की ओर आकर्पित करती है, जिनसे उनकी सच्चे आध्यात्मिक सुख की ओर दृष्टि नही जाती किन्तु जो अशिक्षित कहलाते है वे लोग जीवन के सनातन सत्यो को सहजता से समझ सकते है और जीवन का सन्तोष पा सकते है।

आध्यात्मिक ज्ञान :

☐जहरीले साप को मत्रज्ञ ही पकड सकता है, साधारणव्यक्ति नही। मत्र जानने वाला उसे गले मे डाल देता है। इसी प्रकार जिसने आध्यात्मिक ज्ञान को आचरण मे लाया है, उसे सासारिक मोह, काम-विकार सता नही सकते।

आनन्द :

☐आनन्द का वृक्ष बुद्धि की अपेक्षा नीति की भूमि मे अधिक फैलता और फूलता है।

☐सच्चे आनन्द का आधार हमारे अन्त.करण मे ही है।

☐मन का आनन्द ज्ञान मे और शरीर का आनद स्वास्थ्य मे है।

☐केवल आध्यात्मिक जीवन मे ही आनन्द है।

☐जब तक वासना की प्रबलता रहेगी तब तक प्रभु प्राप्ति का आनन्द नही मिल सकता।

☐सयम और त्याग के मार्ग मे ही हम शान्ति और आनन्द तक पहुँच सकते है।

☐आनन्द तो अपने पास है। इसे दूसरो को देने से जो आनन्द मिलता है उसी का नाम परमानन्द है। जो शरीर की तृप्ति के लिये आनन्द दिया जाता है वह विषयानन्द है।

☐आत्मस्वरूप को नही समझना ही अज्ञानता है, आत्मा का ज्ञान ही आनन्द है।

☐आनन्द बाह्य परिस्थितियो पर नही, भीतरी परिस्थितियो पर निर्भर है।

☐अपने लिये जीना ही दुख है।

☐दूसरो के लिए जीना ही सुख है।

☐जिस सीमा तक तुम दूसरो के लिये जीओगे, उसी सीमा तक आनन्द के निकट होगे।

☐आनन्द सर्वोत्तम मदिरा है।

आनन्दी :

☐वह गमगीन हृदय कितना भव्य है जो खुशी का तराना गाकर गम को भगाता रहता है।

आनन्द का साधन :

□आनन्द प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण साधन है—कार्यमग्न होना।

आपत्ति :

□आपत्तियो से बढ कर और कोई बडी शिक्षा नही है।

□सतत सफलता हमे ससार का केवल एक पक्ष दिखाती है, आपत्तिया उस चित्र का दूसरा पक्ष भी दर्शाती है।

आपत्ति और सम्पत्ति :

□आपत्ति 'मनुष्य' बनाती है और सम्पत्ति 'राक्षस'।

आर्त और रौद्रध्यान :

□विषय और उसके साधनों की प्राप्ति की इच्छा आर्तध्यान है और प्राप्त हुई वस्तुओ के रक्षण की बुद्धि रौद्रध्यान है।

आरोग्य :

□आत्मनिरीक्षण से मन का, मौन से वाणी का, कर्म से शरीर का दोप नष्ट हुए विना आरोग्य नही मिलता।

आलसी :

□आलसी व्यक्ति बन्धे हुए पानी के समान है, जोकि अपने आप विगडने लगता है।

आलस्य :

□उन्नति का सवसे वडा शत्रु आलस्य है। आलस्य द्ररिद्रता का पुरस्कार है।

आवरण :

☐ सत्य पर सौंदर्य का आवरण बिछा हुआ है। पारदर्शी चक्षु के द्वारा ही उस सत्य का दर्शन हो सकता है। घूघट मे पति-पत्नी का मुह नही देख पाता। आवरण मे सत्य का वास्तविक स्वरूप प्रकट नही हो सकता।

☐ तुम्बे का स्वभाव पानी पर तैरने का है। यदि उस पर लोहे का बडा आवरण चढा दिया जाय तो वह पानी मे डूब जायगा।

☐ आत्मा का स्वभाव भी ऊर्ध्व गमन का ही है, किन्तु कर्मों के भारी आवरण के कारण वह नीचे की ओर भटकता रहता है। ज्योही आवरण हट जाता है आत्मा ऊर्ध्वगामी हो जाती है।

आवश्यकता :

☐ आवश्यकता दुर्बल को भी साहसी बना देती है।

आशा :

☐ आशा सर्वोत्कृष्ट प्रकाश है। निराशा घोर अन्धकार।

☐ निरर्थक आशा से बधा मानव अपना हृदय सुखा डालता है और आशा की कडी टूटते ही वह झट से विदा हो जाता है।

☐ दो आशाओ से मुक्ति पाना कठिन है—एक लाभ की आशा और दूसरी जीवन की आशा।

☐ आशा एक ज्योति स्वरूप दीप स्तम्भ है, तो निराशा निबिड अन्धकार। आशा कर्म का प्रवेश द्वार एव दिव्योत्साह की जननी

है। कर्म मार्ग को मानने वाले व 'नैराश्य परम सुखम्' को मानने वाले भी आशा से मुक्त नहीं है।

आशा के पुष्प :

☐ निराशा की कब्र पर आशा के पुष्प चढायेगे।

आशातना :

☐ आशीविष सर्प अत्यन्त क्रुद्ध होने पर भी 'जीवननाश' से अधिक क्या अहित कर सकता है ? किन्तु गुरु की अप्रसन्नता सम्यक्त्व का नाश कर देती है। अत गुरु की आशातना से मोक्ष नही मिलता।

आशा रखें :

☐ शानदार था भूत और भविष्यत् भी महान है।
अगर वनाये हम उसे, जो कि वर्तमान है।

आशावान :

☐ आशावान प्राणी प्रत्येक वस्तु का यथातथ्य रूप देखता है, उसकी पूर्णता मे विश्वास रखता है। निराशावादी उसी को एकागी दृष्टिकोण से खण्डित रूप मे देखता है। आशावादी वुद्धि के प्रकाश मे आगे वढता है। निराशावादी जडता मे ठोकरे खाता है। आशावादी ऐश्वर्य प्राप्ति का उत्साह रखता है। निराशावादी स्वय नरक कुण्ड मे गिर कर अन्य को भी उसी मे डूवने के लिए घसीटता है।

आश्चर्य :

☐आश्चर्य है कि लोग जीवन वढाना चाहते है, सुधारना नही।

☐आश्चर्य है कि हम कार्य करने की शक्ति रखते हुए भी सशय-शीलता के कारण कार्य नही कर सकते। जिन कार्यों को हम नही कर सकते उनकी कल्पना कर सकते है।

☐सबसे बडा आश्चर्य यही कि रोज बेशुमार लोग मरते चले जा रहे है, फिर भी जीने वालो को यह नही लगता कि एक रोज हमे भी मरना होगा।

☐आश्चर्य है कि लोग जीवन को ज्यो-त्यो जीना चाहते है, पर उसका सुधारकर सुखमय बनाने की चेष्टा नही करते।

आश्रय :

☐दु खी आपत्तिग्रम्त, रोगी, दरिद्रजनो के लिए सन्त परम आश्रय है।

आसक्ति :

☐आसक्ति का सब प्रकार से त्याग करना चाहिए। यदि सम्पूर्ण आसक्ति का त्याग न हो सके तो हमे सतत सन्तो की सेवा और उनके प्रवचन सुनने चाहिए। जिससे आसक्ति अपने आप घटती जायगी।

☐आसक्ति के बन्धन यदि टूट जाये तो आप देखेगे कि अपनी आत्मा मे ही अमृत का झरना बह रहा है।

ईश्वर शरण :

□एकमात्र ईश्वर की शरण ग्रहण करनेवाले को किसी की शरण की आवश्यकता नही रहती ।

ईश्वर की पूजा :

□जिस किसी प्रकार से, जिस किसी प्राणी को संतोष दे सके, वास्तव मे यही ईश्वर की पूजा है ।

ईश्वरमय :

□जो ईश्वरमय हैं, उसका क्षय कैसा ?

ईमानदारी :

□ईमानदारी के एक पैसे मे वेईमानी के लाख रुपये से अधिक वल है । क्योंकि वह स्थायी है । उस पैसे के साथ सत्कर्म का गौरव जुडा हुआ है ।

□जो यह कहता है कि 'ईमानदार व्यक्ति' नाम की कोई वस्तु है ही नही, वह स्वय धूर्त है।

ईर्ष्या :

□ईर्ष्या करने वाले मनुष्य मे स्वय कुछ बनने की महत्वाकाक्षा नही होतीं, अपितु उसकी अभिलाषा होती है कि दूसरा भी मार्ग पतित होकर उसके समान हो जाए। इसीलिए ईर्ष्या को पाप माना गया है।

ईर्ष्या-मात्सर्य के कारण :

□प्रिय-अप्रिय होने से ही ईर्ष्या एवं मात्सर्य होते है, प्रिय-अप्रिय के न होने से ईर्ष्या एव मात्सर्य नही होते।

ईर्ष्यालु :

□ईर्ष्यालु लोग बडे दु खी लोग है; क्योकि जितनी यन्त्रणाएँ उन्हे अपने दु खो से होती है उतनी ही दूसरो की खुशियो से।

ईमानदार :

□बेइमान ईमानदार को हानि नही पहुचा सकता। बेईमान यदि कभी ईमानदार को धोखा देने की कोशिश करेगा तो वह धोखा लौटकर बेईमान को ही हानि पहुँचाएगा।

००

उपदेश :

☐ विना मांगे किसी को उपदेश मत दो ।

उद्योगवीर :

☐ जो पुरुष उद्योगवीर है, वह कोरे वाग्वीर पुरुषो पर अपना अधिकार जमा लेता है ।

उऋण होने का तरीका :

☐ कर्ज चुकाने के दो ही उपाय हैं—आमदनी बढाने के लिए मेहनत करना, या खर्च में किफायतशारी करना ।

उचित :

☐ पाप मे पडना मनुष्योचित है।
पाप मे पडे रहना दुष्टोचित है।
पाप पर दुखी होना सन्तोचित है।
पाप से मुक्त होना ईश्वरोचित है।

उच्चसंस्कृति :

☐बडी से बडी बात को सरल से सरल तरीके से कहना उच्च सस्कृति का प्रमाण है।

उठो, जागो और ज्ञान प्राप्त करो :

☐"उत्तिष्ठत जागृत, प्राप्य वरान्निबोधत"
हे अज्ञान से ग्रस्त लोगो! उठो, जागो और श्रेष्ठ जनो के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो।

उत्तम :

☐प्राणी मात्र को न सताना ही उत्तम दान है, कामना का त्याग ही उत्तम तप है। वासनाओ को जीतने मे ही वीरता है और सत्य ही समदर्शन है।

☐सर्व व्रतो मे श्रेष्ठ ब्रह्मचर्यव्रत।
सर्व त्यागो मे उत्तम रसत्याग।
सर्व धर्मों मे श्रेष्ठ अहिंसा परमोधर्म।
सर्व तपों मे श्रेष्ठ आयबिल तप।

सर्व दानो मे श्रेष्ठ अभयदान ।

सर्व पात्रो मे श्रेष्ठ सुपात्रदान ।

सर्व श्रावको मे श्रेष्ठ बारहव्रतधारी श्रावक ।

उत्तम उपाय :

☐दुर्जनो की मित्रता जैसी खतरनाक है वैसी शत्रुता भी प्राण-नाशक है । उपेक्षा ही उसका उत्तम उपाय है ।

उत्तम क्या है

☐वही उत्तम भोजन है, जो साधु, दीन, दुखियो को दान देकर बचा है । वही मित्रता है, जो दूसरे मनुष्य से की जाती है, वही बुद्धिमानी है, जिसमे पाप नही है । वही धर्म है, जो बिना छल कपट के किया जाता है ।

उत्तम-पुरुष :

☐उत्तम पुरुष जिस कार्य को आरभ करते हैं उसे पूर्ण करके ही छोडते है ।

उत्तम-वाणी :

☐जिसका अन्तर्जीवन जैसा होता है वैसी ही उसकी वाणी होती है । उत्तम जीवन जीने वाले के पास ही उत्तमवाणी मिलती है । जूते की दुकान पर कही मिठाई मिलती है ?

उत्तम विचार :

☐पाप लकडी के समान और ज्ञान अग्नि के समान है । यदि

लकड़ी अधिक हो और अग्नि थोड़ी हो तो भी वह धीरे-धीरे सब लकड़ियो को भस्म कर देती है। वैसे ही थोड़े से उत्तम विचार हो तो भी वे बहुत दिनो के बुरे विचारो को नष्ट कर देते है।

उत्थान पतन :

☐आत्मा का उत्थान पतन, ऊर्ध्वगमन, अधोगमन भावनाओ पर, सकल्पो पर आधारित है।

उत्सर्ग और अपवाद :

☐जीवन मे नियमोपनियमो की जो सर्वमान्य विधि—नियम है वह उत्सर्ग है। विशेष अवसरो पर विशिष्ट विधानो का सकेत है वह अपवाद है।

उत्साह :

☐विश्व इतिहास मे प्रत्येक महान और महत्वपूर्ण कार्य उत्साह से ही सफल हुए है।

☐अन्धे उत्साह से हानि ही हानि है।

☐अखण्डित उत्साह यही सम्पत्ति है। वीर पुरुषो के हृदय मे खेद और आलस्य के लिए कोई अवकाश नही होता।

उदार :

☐जिसे विश्व ही अपना घर लगता है उसे परिग्रह रखने की क्या आवश्यकता ?

उदारता :

□भाग्यशाली व्यक्ति उदार होता है। क्योंकि उदारता से ही उसका भाग्य खिलता है।

□उदारता का हर काम स्वर्ग की ओर एक कदम है।

उद्दण्ड :

□जो उद्दण्ड व्यक्ति होते है वे दण्ड और शस्त्र से जर्जर, असभ्य वचनो के द्वारा तिरस्कृत, करुण, परवश, भूख, और प्यास से पीडित होकर दु ख का अनुभव करते हुये देखे जाते है।

उद्देश्य

□महान उद्देश्य से शासित व्यक्ति को भाग्य नही रोक सकता।

उद्योगी :

□उद्योगी व्यक्ति के सामने साध्य असाध्य का प्रश्न नही उठता उसके लिए तो सभी कुछ साध्य होता है।

उन्नति :

□प्रत्येक को अपनी ही उन्नति मे सतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति मे ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

□आधुनिक उन्नति से जो सम्पत्ति बढ रही है, जब तक वह पूजी-निर्माण और विलासता की उत्पत्ति मे लगी रहेगी, तब तक उन्नति सच्ची और स्थायी नही बन सकती।

उन्नति और अवनति :

□मन की शक्तियो का केन्द्रीकरण ही जीवन की उन्नति है। और मन की शक्तियो का विकेन्द्रीकरण ही अवनति है।

उन्नति के महागीत :

□ऊँचा ध्येय, परोपकार व निस्वार्थ बलिदान की भावना ये उन्नति के महागीत है।

उन्माद :

□बात पर जब 'वाद' का भूत सवार हो जाता हैं तो वह 'उन्माद' बन जाता है।

उपकार-अपकार :

□न तो कोई जीव का उपकार करता है और न कोई उसका अपकार ही शुभाशुभ भाव ही जीव का उपकार-अपकार करता है।

उपदेश :

□जिसे हर कोई देने को तैयार रहता है पर लेता कोई नही, ऐसी वस्तु क्या है ? उपदेश, सलाह।

□जहाँ उपदेश अधिक दिया जाता है वहा गम्भीरता कम हो जाती है। जहा गम्भीरता अधिक होती है, वहाँ उपदेश कम होता है।

☐ उपदेशामृत मे सचमुच ही,
मधुरअमृत रस झरता है।
क्षणभंगुर दूपित जीवन को,
अजर-अमर शुचि करता है।

☐जव मैं अपने हमउम्र मित्रो के साथ पिता के सठियाने का मजाक उडाने मे तल्लीन था, तभी मेरा पुत्र मेरी डायरी पर "अ" से "असभ्यता" लिख कर चला गया।

☐उपदेश देना सरल है, उपाय वताना कठिन है।

☐जो उपदेश आत्मा से निकलता है, आत्मा पर सवसे ज्यादा कारगर होता है।

उपयोगिता :

☐उपयोगिता में ही सच्ची सुन्दरता है। यह ज्ञान तो तू शीघ्र प्राप्त कर ही ले।

उपयोगी :

☐शास्त्रो की सख्या अपार है, विद्याएँ अनन्त है। किन्तु वही शास्त्र या विद्या उपयोगी है जो आचरण में लाई जा सके। जल-राशि अपार है, किन्तु वही जल उपयोगी है जो पिया जा सके।

उपयोगी जीवन :

☐भार नही, किन्तु आधार, अर्थात उपयोगी वन कर जीवो।

उपवास :

☐उपवास-लघन महान औषधि है । शरीर-शुद्धि और मन शुद्धि को सम्पादन करने की अद्भुत क्षमता उसमे है ।

उपहास :

☐वृद्ध का, मूर्ख का, रोगी का, एव असहाय का उपहास नही करना चाहिए ।

उपाधि :

☐तीन सबसे बडी उपाधिया जो मानव को दी जा सकती है, यह है—शहीद, वीर, और सन्त ।

उपेक्षा :

☐किसी भी काम को लापरवाही से बुरी तरह से करने की अपेक्षा न करना ही अच्छा है । बुरी तरह करने से पछताना पडता है । जो काम करने जैसा हो, उसे अच्छी तरह मन लगा कर करना ही अच्छा है । अच्छी तरह करने पर पीछे पछतावा नही होता ।

उर्वशी :

☐विश्वामित्र की तपस्या को भग करने वाली उर्वशी थी । मनुष्य के मन को भ्रमित करने वाली मोहिनी उर्वशी ही है ।

उल्लंघन :

☐जो सज्जनो की मान मर्यादा का भंग करता है उसकी आयु, सम्पत्ति, यश, धर्म, पुण्य और श्रेय सभी नष्ट हो जाते हैं । ००

एकता के सूत्र :

□"संगच्छध्व सवदध्व सवो मनासि जानताम्"

हे मनुष्यो ! तुम समष्टि-भावना से प्रेरित होकर एक साथ कार्यों मे प्रवृत्त होओ, एकमत से रहो और परस्पर मद्भाव से वरतो ।

एक धर्मवाले :

□मैं देखता हू कि सारी दुनिया के समझदार और विवेकी मनुष्य एक ही धर्मवाले थे, साहस और भलाई के धर्मवाले ।

एकरूपता :

□मन, वचन और शरीर इन तीनो की एक क्रिया होनी चाहिए जैसा भीतर वैसा वाहर ।

एकाग्रता :

☐यदि जीवन मे वुद्धिमानी की कोई वात है तो वह एकाग्रता है और यदि कोई खराव वात है तो वह अपनी शक्तियो को विखेर देना। वहु-चित्तता कैसी भी हो, इससे क्या लाभ ?

☐जो व्यक्ति जीवन में एक वात खोजता है वह आशा कर सकता है कि जीवन समाप्त होने से पूर्व वह उसे प्राप्त हो जायगी।

☐जव मैं किसी काम मे लग जाता हूं उस समय ससार की और कोई वात मेरे सामने नही रहती। यही उपयोगी पुरुष वनने की कुंजी है, परन्तु लोग इसे अपने मनोरंजन के समय भी साथ नहीं रख सकते।

☐जिसमें तुम्हारी प्रवृत्ति हो, उसी में लगे रहो। अपने वुद्धि के मार्ग को मत छोड़ो। प्रकृति तुम्हे जो कुछ वनाना चाहती है वही वनो। तुम्हे विजय प्राप्त होगी। इसके विपरीत यदि तुम और कुछ वनना चाहोगे तो कुछ भी न वन सकोगे।

☐कार्य सिद्धि के लिए एकाग्रता की नितान्त आवश्यकता है। एकाग्रता मानव को तदाकार वना देती है। एक ही क्रिया मे शक्ति लगाने से क्रिया निखर जाती है अन्यथा वह विखर जाती है।

एकान्तवास :

☐एकान्तवास शोक-ज्वाला के लिए समीर के समान है।

एहसान :

☐केवल वही सच्चा एहसान कर सकता है जो एकबार एहसान करके भूल चुका हो।

ऐश्वर्य :

☐जैसा कि मधु जुटाने वाली मधुमक्खी का छत्ता बढता है, अनेक नदियो के सयोग से समुद्र बढता है। वैसे ही धर्मानुसार कमाने वाले का ऐश्वर्य बढता है।

औषध :

☐मेरा विश्वास है कि आज का सम्पूर्ण चिकित्साशास्त्र और औषधियाँ यदि समुद्र मे डुवो दी जाएँ तो यह मनुष्य का परम सौभाग्य होगा किन्तु समुद्रस्थ प्राणियो का दुर्भाग्य।

☐सभी औषधो मे सर्वोत्तम है, विश्राम और निराहार।

☐पथ्य से रहने वाले रोगी के लिए औषध की आवश्यकता नही है और पथ्य से न रहने वाले रोगी के लिए भी औषध की आवश्यकता नही॥

○○

कान :

□कानो के दुरुपयोग से मन बहुत अशान्त और कलुषित हो जाता है, कान इसका अनुभव नही कर पाते ।

करुणा :

□आंसू करुणा के बूद है ।

कर्ज :

□कर्ज अथाह सागर है । उसे पार करना सामान्य व्यक्ति के सामर्थ्य से बाहर है ।

कामनाए :

□कामनाएँ समुद्र के समान निःसीम है, उनका कही अन्त नहीं हैं ।

कल्पना :

☐पागल, प्रेमी और कवि, इनकी कल्पनाएँ एक-सी होती है।

☐कल्पना मे जो आनन्द है वह यथार्थ मे नही है।

☐कल्पना विश्व पर शासन करती है।

क्रान्तदर्शी :

☐क्रान्तदर्शी श्रेष्ठ ज्ञानी ऐश्वर्य मे समृद्ध होकर भी किसी को पीडा नही देते है, सब पर अनुग्रह ही करते है।

कवच :

☐परमात्मा का विश्वास ही मेरा आन्तरिक कवच है।

कवि :

☐कवि की पदवी कितनी महान है, कैसी उच्च है। वह दिलो के सिहासन पर राज्य करता है, वह सोती हुई जाति को जगाता है, वह मरे हुए देश मे नवजीवन का सचार करता है।

☐कवि का हृदय जल मे कमल पात्र की तरह निर्लेप होता है। उस पर उसकी रचना या कल्पना का कोई प्रभाव नही पडता।

☐कवि सृष्टि के सौन्दर्य का मर्मज्ञ है। वह ऐसा यन्त्र है जिसके द्वारा सृष्टि का सौन्दर्य देखा जाता है।

काम-भोग :

☐काम-भोग शल्य है, विष है और आशीविष सर्प के तुल्य है।

काम-भोग की इच्छा करने वाले, उनका सेवन न करते हुए भी दुर्गति को प्राप्त होते है ।

क्लेशभागी :

☐मै लोक-समुदाय के साथ रहूंगा—ऐसा मान कर अज्ञानी मनुष्य धृष्ट बन जाता है। वह कामभोग के अनुराग से क्लेश पाता है ।

कलंक :

☐जिस वस्तु के देखने मे कलंक लगता हो, उसे न देखो, जिस तरह चौथ के चांद को कोई नही देखता ।

कष्ट :

☐आज के कष्टों का सामना करने वाले के पास आगामी कल के कष्ट आते हुए झिझकते हैं ।

कन्दर्पी-भावना :

☐काम-कथा करना, हँसी-मजाक करना, आचरण, स्वभाव, हास्य और विकथाओ के द्वारा दूसरो को विस्मित करना—कदर्पी भावना है ।

किल्विषिकी भावना :

☐ज्ञान, केवलज्ञानी, धर्माचार्य, सघ और साधुओ की निन्दा करना, माया करना किल्विपिकी भावना है ।

कनक और कामिनी :

□कनक और कामिनी को त्यागे विना आध्यात्मिक पूर्णता प्राप्त नही हो सकती ।

कमजोरियां :

□हमारी कुछ कमजोरियाँ जन्मजात होती हैं, और अन्य हमारी शिक्षा का परिणाम है । प्रश्न यह है कि इनमे से कौन अधिक दुखदायी है ।

कमजोरी का इलाज :

□कमजोरी का इलाज कमजोरी की चिन्ता करना नही, पर शक्ति का विचार करना है ।

करुणा :

□मनुष्य के अन्त.करण मे सात्विकता की ज्योति जगानेवाली यही करुणा है ।

कर्तव्यनिष्ठा :

□ससार में जो बडे लोग हो गये है, जिनकी कीर्ति से मनुष्य-जाति का इतिहास प्रकाशित है, यह सब उनकी कर्तव्यनिष्ठा का ही फल है ।

कर्म-भूमि :

□यह धरती ही हमारे कर्मो की भूमि है ।

कंजूस :

☐कृपण-कन्जूस आत्महत्या करने चलेगा तो जहर भी दूसरे से ही मांग कर खायेगा। जिस प्रकार किसान खेत की रक्षा के लिए अडवा बनाता है। वह अडवा न तो खा सकता है और न खाने देता है। कृपण व्यक्ति भी उसी के समान है, न खुद खाता है और न खाने देता है।

☐मधुमक्खी अपने शहद को न तो खाती है और न खाने देती है। किन्तु तीसरा व्यक्ति जबर्दस्ती उस शहद को उठा ले जाता है और वह हाथ मलती है। यही स्थिति कन्जूस की भी होती है।

कठिन :

☐सबसे कठिन तीन वस्तुएँ है—१. रहस्य को अप्रकट रखना २. कष्ट को भूल जाना और ३. अवकाश का सदुपयोग करना।

☐बहुतसी वस्तुएं, जो आकार मे कठिन प्रतीत होती है, करने मे उतनी ही सरल निकलती है।

कठिनकार्य :

☐राई के दाने जव विखर जाते है तो उसे एकत्रित करना कठिन हो जाता है। उसी प्रकार एकबार मन के भटक जाने पर उसे स्थान पर लाना कठिन व दुःसाध्य हो जाता है।

कठिनाइयां

☐प्रकृति जव कठिनाईयाँ वढाती है तो वुद्धि भी वढाती है ।

☐कठिनाईयो मे ही सिद्धान्तो की परीक्षा होती है, विना विपत्तियो मे पडे मनुष्य नही जान सकता कि वह ईमानदार है या नही । कठिनाइयो मे ही मित्र की परीक्षा होती है ।

धीरज धर्म मित्र अरु नारि,
आपत्तिकाल परखिये चारि ।

☐जिस प्रकार श्रम शरीर को शक्ति प्रदान करता है उसी प्रकार कठिनाईयाँ मनुष्य को शक्तिसम्पन्न वनाती है ।

☐मत्य की ओर ले जाने वाला प्रथम प्रशस्त मार्ग कठिनाईयाँ है ।

कडा परिश्रम :

☐सफलता की वडी कुंजी है—कडा परिश्रम और एकाग्रता ।

कणभर :

☐कणभर आचरण मणभर ज्ञान से श्रेष्ठ है ।

कण से मोती

☐वर्षा की एक वूँद वादल से निकल कर नीचे की ओर जा रही थी, तव उसने समुद्र की लम्वाई चौडाई देखी तो स्तम्भित हो गई व अपनी विशालता से भी विशाल समुद्र को देखकर लज्जित हो गई । वोली—मैं कहाँ तुच्छ, और ये कहाँ विशाल ! मेरा

स्वतन्त्र अस्तित्त्व ही तुझ मे मिलने से खत्म हो जायेगा।
जब बूद ने अपने को तुच्छ समझा तो सीप ने उसे अपने मे समा लिया व अपनी जान से भी ज्यादा समझकर पालन पोषण किया। वह बूद चमकीले मोती के नाम से मशहूर हो गई।

कथनी और करनी .

☐मनुष्य के पास जीवन का ध्येय न हो तो उसका जीवन विलासिता मे फँस जाता है, अगरबत्ती अग्नि के सयोग से वातावरण को सुवासित कर देती है उसीप्रकार कथनी और करनी का सयोग हो जाय तो इससे शान्ति का परिमल प्रकट हो जाता है।

कमी है :

☐ससार मे मार्गदर्शक की कमी नही है किन्तु मार्गपर चलने वालो की कमी हे।

कयामत

☐कर्जदारी को मामूली असुविधा समझने की आदत न डालो; नही तो अन्त मे पाओगे कि कर्जदारी कयामत है।

करके कहो :

☐कथनी करनी मे अन्तर हैं। मानव को प्रथम करना चाहिए। सशयशील व्यक्ति कर नही सकता। जिसने किया है, वह निसकोच होकर कह सकता है।

कर्त्तव्य :

□जीवन का सबसे बडा पुरस्कार, जीवन की सबसे बडी सम्पत्ति है—किसी विशेष बात को लेकर जन्म लेना। उसी की पूर्ति करने मे मनुष्य को सुख मिलता है।

□एक सार्वजनिक कर्त्तव्य को सम्पन्न करते समय व्यक्तिगत विचार कदापि बाधक नही होना चाहिए।

□अपना कर्त्तव्य करने से हम उसे करने की योग्यता प्राप्त करते है।

□जो अपना कर्त्तव्य करने से चूकता है, वह एक महान लाभ से स्वय को वचित रखता है।

□कर्त्तव्य श्रेष्ठ होता है पर कभी-कभी भाग्य भी प्रबल होता है। तकदीर से तदबीर श्रेष्ठ होती है। अतः हे मानव ! तू भगवान पर विश्वास रखकर सुपन्थ का अवलम्बन ले।

□एक कर्त्तव्य करने का इनाम यही है कि दूसरा कर्त्तव्य करने की शक्ति मिलती है।

कर्त्तव्यशील

□जो व्यक्ति सर्दी, गर्मी तथा अन्य छोटे, बडे विघ्नो को तिनके से अधिक महत्त्व नही देता, वह कभी सुख से वचित नही होता।

कर्त्तव्य से मुंह चुराना :

□आज बहुत सर्दी है, आज बहुत गर्मी है, अब तो रात पड़ गई

है, आज काम करने का मूड नही है। आज मूहूर्त अच्छा नही है, इस प्रकार के बहाने खोजकर कर्त्तव्य से दूर भागता हुआ मनुष्य धनहीन दरिद्र हो जाता है।

कर्म :

☐ मनुष्य किसी दूसरे कारण से नही, अपने ही कर्मों से मारा जाता है।

☐ अपवित्र विचार भी उतना ही बुरा है जितना बुरा अपवित्र कर्म। सयमित इच्छा ही सर्वोच्च परिणाम पर ले जाती है।

☐ किसी भी कार्य के आरम्भ से पूर्व सुसम्मति प्राप्त कर लो, और पूर्णतः उसमे लग जाओ।

☐ जिस वृक्ष की जड सूख गई हो, उसे कितना ही सीचिये, वह हरा-भरा नही होता। मोह के क्षीण होने पर कर्म भी फिर हरे भरे नही होते।

कर्म-फल :

☐ अच्छे कर्म का अच्छा फल और बुरे कर्म का बुरा फल होता है। "सुचिण्ण कम्मा सुच्चिणफला,

दुच्चिण्ण कम्मा दुच्चिण फला भवई।"

☐ सेंध के द्वार पर पकडा गया पापी चोर जैसे अपने ही कर्म से मारा जाता है, इसी पकार पापी जन मरकर परलोक मे अपने ही कर्म से पीड़ित होता है।

कर्ममुक्त आत्मा :

☐परलोक, पाप, पुण्य, नरक, स्वर्ग, उपदेश, आदेश देह के लिए नही, आत्मा और देह को जोडने वाला कर्म है। कर्म से मुक्त आत्मा इन सबसे मुक्त होता है।

कल:

☐आज नही कल, 'कल'—यही आलसी व्यक्तियो का गान है।

☐स्वय को कल पर आश्वस्त मत कर, क्योकि मुझे नही मालूम कि कोई दिवस तेरे लिए क्या लायेगा।

☐गहन तमिस्रा मे भी मुकुलित 'कल' निहित।

कलक चढ़ाने का फल :

☐जो शुद्ध, निष्पाप, निर्दोप व्यक्ति पर दोप लगाता है, उस अज्ञानी जीव पर वह सब पाप पलटकर वैसे ही आ जाता है, जैसे कि सामने की हवा मे फेकी गयी सूक्ष्म धूल।

कल नहीं आज :

☐जो कर्त्तव्य कल करना है, वह आज ही कर लेना अच्छा है। मृत्यु अत्यन्त निर्दय है। पता नही वह कब आ जाये।

☐आज ही अपने कर्त्तव्य मे जुट जाना चाहिए। कौन जानता है कल मृत्यु ही आ जाये ?

कलम :

☐शस्त्र की अपेक्षा कलम का शस्त्र अधिक बलवान है क्योकि

कलम रूप शस्त्र का प्रयोग सामाजिक, आर्थिक एव धार्मिक क्रांति में तोप, तलवार और अणुवम से भी अधिकतम बलवान है। सिर्फ एक ही शब्द से ससार भयाक्रान्त व शान्तिशील बन जाता है।

कला :

☐मानव की वहुमुखी भावनाओं का प्रबल प्रवाह जब रोके नही रुकता, तभी वह कला के रूप मे फूट पड़ता है।

कला और विज्ञान :

☐कला और विज्ञान की उन्नति की कसौटी है जनता का उपकार, जनता को राहत, जनता का आनन्द और सुविधा ! अगर कला और विज्ञान वे चीजे देने मे असमर्थ रहे, तो यह समझना चाहिए कि वे उन्नति के बदले अवनति कर रहे है।

कलाकार :

☐महान कलाकार वह है जो सत्य को सरल कर दे।

☐सवसे बडा कलाकार वह है, जिसकी कला मे महानतम विचार वड़ी सख्या मे हो। कलाकार अन्तर को देखता है बाह्य को नही।

कलियुग :

☐जिसका हृदय दया से भरा हुआ है, जिसके वचन सत्य से भरे है और जिसका शरीर दूसरो का हित करने मे लगा हुआ है। उसका कलियुग क्या बिगाड़ सकता है।

कल्पना :

□कल्पना ज्ञान से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है ।

□कल्पना आत्मा का नेत्र है ।

□जो बिना अध्ययन के केवल कल्पना का आश्रय लेता है, उसके पख अवश्य है, किन्तु पग नही ।

कल्पना-शक्ति :

□हममे कल्पना-शक्ति प्रकृति प्रदत्त है और इसी शक्ति से हम दृश्य जगत के अन्धकार को प्रकाशमय बना सकते है । बुद्धि एव चिन्तन से कर्त्ता का सर्वाधिक शक्तिशाली यन्त्र है ।

कल्याण की कामना :

□मेरे प्यारे साथियो ! गर्वपूर्वक उच्च स्वर से यह घोषणा करो कि "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी ।" जननी व जन्मभूमि तथा स्वर्ग और रत्नो मे से कोई भी चुनने का कहे तो प्रथम दो का ही चुनाव करो । भारत की मिट्टी ही तुम्हारा स्वर्ग है, मोक्ष है, भारत के कल्याण मे ही तुम्हारा कल्याण निहित है ।

कविता

□कविता की सबसे बडी देन शान्ति है ।

□कविता जब सगीत से बहुत दूर निकल जाती है तो दम तोडने लगती है ।

☐कविता का महान लक्ष्य है कि वह लोगो की चिन्ताओ को शान्त करने और उनके विचारो को उन्नत करने मे मित्र का काम करे।

काटो नहीं, खोलो :

☐गाठ को काटना नही, खोलना चाहिए। काटने से समस्या का हल नही होता। काटना शक्ति का प्रयोग है, और खोलना अहिंसात्मक प्रतिकार।

कानून :

☐कानूत तो जैसे मकडी के जाले है। छोटे-छोटे जीव उनमे फँसकर प्राण खो बैठते है जबकि बडे जीव तो उन्हे उखाड फेकते है।

☐तर्क ही कानून का जीवन है, यही नही, सामान्य कानून स्वय ही तर्क के अतिरिक्त और कुछ नही है।

कापुरुष :

☐कापुरुष अपनी मृत्यु से पूर्व ही अनेको बार मृत्यु का अनुभव कर चुकते है, किन्तु वीर कभी भी एक बार से अधिक नही मरते।

☐कापुरुष डगमगा जाते है, किन्तु साहसी बहुधा आपदाओ पर विजय प्राप्त कर लेते है।

काम :

☐ससार के सुन्दर पदार्थ काम नही है, मन मे राग का हो जाना ही वस्तुत काम है।

☐काम प्रत्येक मनुष्य का प्राणरक्षक है।

काम और कामना :

☐मनुष्य को काम करना चाहिए, कामना नही। काम मनुष्य को ऊंचा उठाता है और कामना मनुष्य को नीचे गिराती है।

काम-भोग .

☐गृहस्थो के काम-भोग स्वल्प-सारवाले और अल्पकालिक है। अनित्य है, कुश के अग्रभाग पर स्थित जल-बिन्दु के समान चचल है।

काम न करें :

☐समझदार व्यक्ति ऐसे कार्यों का प्रारम्भ न करे जिसका फल न हो, जिनका अन्त बुरा हो, जिनके करने मे आय और व्यय समान हो. और जो अशक्य हो।

कामातुर ·

☐कामातुर व्यक्ति भय और लज्जा से रहित होता है।

कायर

☐कायर तभी धमकी देता है जब सुरक्षित होता है।

□एक कायर कुत्ता उतनी तीव्रता से काटता नही, जितनी तीव्रता से भौकता है ।

कायरता :

□यह ससार कायरो के लिए नही है । पलायन करने का प्रयास मत करो ।

कार्य :

□जो जिस कार्य मे कुशल है उसको उसी कार्य मे लगाना चाहिए ।

□प्रत्येक कार्य द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से अच्छा, सच्चा और योग्य है या नही, यह विचार करके ही करना चाहिए ।

□कितना कार्य किया है उसका मूल्य नही, किन्तु कैसा कार्य किया है उसका मूल्य है ।

□तीरन्दाज व्यक्ति तीर छोडने के पहले निशाना साधता है । बुद्धिमान व्यक्ति कार्य करने के पहले सोचता है ।

कार्यकारण भाव :

□यदि घट की जरूरत पडेगी तो कुम्भकार के यहा जाना ही पड़ेगा । कोई भी क्रिया बिना कारण के नही हो सकती । कार्य कारण का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है ।

□अन्धकार से प्रकाश की आवश्यकता अनुभव होती है ।

☐"नासतः सत् जायते" निरस्तिको से अस्तित्व का जन्म नही हो सकता। जिसका अस्तित्व है उसका आधार निरस्तित्व नही हो सकता। शून्य से कुछ भी सम्भव नही है। यह कार्य कारण सिद्धान्त सर्वशक्तिमान है और देश-कालातीत है।

कार्यसिद्धि :

☐नम्रता, अन्त करण की शुद्धता, बुद्धि, बल और धैर्य इन पाँचो के सहयोग से कार्य सिद्ध होता है।

क्या यह उचित है ?

☐कायरता पूछती है—क्या यह सुरक्षित है ?
लोभ वृद्धि पूछती है—क्या यह लोकप्रिय है ?
लेकिन अन्त.करण पूछता है—क्या यह उचित है ?

क्या कहना चाहिए ?

☐धर्म कहना चाहिए, अधर्म नही।
प्रिय कहना चाहिए, अप्रिय नही।
सत्य कहना चाहिए, असत्य नही।

कितना अन्तर.

☐वैज्ञानिक प्रत्येक वस्तु का प्रयोग दूसरो पर करके फिर अपने पर करते है, जबकि ज्ञानी प्रत्येक वस्तु का प्रयोग सर्वप्रथम अपने पर करके फिर औरो पर करते है। एक मे स्वार्थ है दूसरे मे परमार्थ।

☐दोपो का दिग्दर्शन दुर्जन भी कराते है व सज्जन भी, किन्तु एक ईर्ष्या के लिए व दूसरा सुधार के लिए।

☐राम भी आये और रावण भी; किन्तु दोनो के आने मे कितना अन्तर ? अगरवत्ती भी अपने मुह से धुआ उगलती है और छोटा दीप भी। किन्तु दोनो मे कितना अन्तर ? एक सुवास फैलाती है तो दूसरा कालिमा।

☐पाश्चात्य जगत मे और पौवर्वात्य जगत मे कितना अन्तर है। एक ओर निज स्वार्थ पर आधारित पाश्चात्य समाजो का अधिकार स्वातत्र्य है, दूसरी ओर आर्य जाति का चरम आत्मोत्सर्ग। एक ओर अधिकार लोलुपता व ऐश्वर्य समृद्धि के लिए रक्त की ताण्डव क्रीडा, तो दूसरी ओर आत्मोत्कर्ष के लिए समस्त वैभव का त्याग।

कीर्ति .

☐कीर्ति का नशा शराब से भी तेज है। शराब का छोड़ना आसान है, किन्तु कीर्ति का छोडना आसान नही।

☐तीन ककार दुर्जय है—कीर्ति, कमना, कामनी।

कुकर्म की सजा

☐कुदरत कुकर्म की सजा धीरे-धीरे देती है।

कूटनीति ·

☐कूटनीति प्राकृतिक मानवीय नियमो के विरुद्ध एक ऐसा दुर्गुण

है जिसने संसार के बड़े भाग को परतन्त्रता की जंजीरों में जकड़ रखा है और जो मानवता के विकास में बड़ी बाधा है।

कृतज्ञता :

☐ कृतज्ञता केवल कर्त्तव्य-पालन ही नहीं, सहयोग प्राप्ति की सफल व उत्कृष्ट कला है।

कृतघ्नी

☐ कृतघ्नी मानव से कृतज्ञ कुत्ता अच्छा है।

कृत्रिमता

☐ आकृति साम्य होने पर भी कृत्रिमपुष्प सहज पुष्प के सौरभ में सदैव अपने को वंचित पाता है।

सहजता के सन्मुख कृत्रिमता वैसी ही छविहीन प्रतीत होती है जैसे एक कुलांगना के सम्मुख पण्यांगना।

☐ आजकल की दुनिया बाह्य-सुन्दर आवरणों से वेष्ठित की पूजा करती है, वस्तु के असली स्वरूप को नहीं पहचानती। असली गुलाब के फूल पांवों तले रौंदे जाते हैं जबकि नकली फूलों से गुलदस्ते सजाये जाते हैं।

क्रूरता :

☐ क्रूरता से बढ़कर और कोई कुरूपता नहीं है।

कैसे बोले :

☐ आत्मवान साधक दृष्ट, परिमित, असंदिग्ध, प्रतिपूर्ण, व्यक्त,

परिचित, वाचालता रहित, और भयरहित भाषा बोले ।

□ बिना पूछे न बोले, बीच मे न बोले, चुगली न खाए, कपट-पूर्ण असत्य का वर्णन करे ।

कैसे बोलना चाहिए :

□ कम बोलो, सच बोलो और सादा बोलो ।

कैसे हो सकता है :

□ तूने बीज आक के बोये है और फल आम के चाहता है यह कैसे संभव हो सकता है ? कार्य नरक के किये हैं और फल स्वर्ग के चाहता है यह कैसे हो सकता है ?

कोरा ज्ञान :

□ जो अनेक सूत्रों और ग्रन्थों को पढकर भी आत्मा को नहीं पहचानता वह कलछी-चमच के समान है, जो रसो मे फिरता है किन्तु उनका स्वाद नहीं जानता ।

क्रान्तियाँ :

□ निम्नतर वर्गो की क्रान्तियां हमेशा उच्चतर वर्गो के अन्याय का परिणाम होती है । पेट की आग क्रान्तियाँ पैदा करती है ।

क्रिया :

□ जो आश्रव के स्थान है वे निमित्त पाकर सवर के स्थान भी बन जाते है और जो सवर के स्थान है वे निमित्त पाकर आश्रव के स्थान भी बन जाते है ।

☐जो क्रिया हितकारक, स्वान्तःसुखाय, सर्वजनहिताय की जाती है, वह श्रेष्ठ है।

क्रिया का भेद

☐एक मानव आगे बढ़ता जाता है एक पीछे हटता जाता है। क्रिया दोनो की समान होते हुए भी कितना अन्तर, एक अपने लक्ष्य को पा जाता है दूसरा लक्ष्य से दूर।

क्रुद्ध

☐क्रुद्ध व्यक्ति राक्षस की तरह भयकर बन जाता है।

क्रोध :

☐क्रोधी मनुष्य मुँह खुला रखता है और आँखें बन्द कर देता है। क्रोध का अन्त पश्चात्ताप मे होता है।

☐क्रोध दुर्बलता और अज्ञान का चिह्न है।

☐क्रोध का जन्म विरोध मे होता है और वह प्रतिशोध की आग मे जलता है।

☐क्षुब्ध जल मे प्रतिबिम्ब नही दिखाई देता, उस प्रकार विक्षुब्ध मानस मे मानवता का प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर नही होता।

☐क्रोध यमराज के समान है, तृष्णा वैतरणी नदी है, विद्या कामधेनु और सन्तोष नन्दन वन है।

☐जहाँ घास नही होता वहा पडी हुई अग्नि अपने आप शान्त हो जाती है। जहाँ क्रोध का सामना नही होता, वहाँ क्रोध अपने

आप शान्त हो जाता है।

□क्रोध विरोध का बाप है और प्रतिशोध का दादा है।

□जिस समय क्रोध उत्पन्न होने वाला हो, उस समय उसके परिणमो पर विचार करो।

□स्मरण रखिए कि आप क्रोध की दशा ही मे अत्यन्त निर्बल एव क्षीणकाय रहते है, कारण यही है कि क्रोध का अस्त्र स्वय चालक को ही घायल करता है।

□क्रुद्ध होने का अर्थ है दूसरो की त्रुटियो का प्रतिशोध स्वय से लेना है।

□जो क्रोध करने मे विलम्ब करता है वह महान विवेक से सम्पन्न है, किन्तु जिसमे उतावलापन है, वह मूर्खता का उपासक है।

क्रोध की फूत्कार :

□शुद्ध दर्पण पर फूँक मारने से वह धुधला हो जाता है। क्रोध की फूत्कार पवित्र मन पर मत मारो वह धुधला हो जायगा। धुधला मन स्वजन-परजन, हित-अहित के ज्ञान से शून्य बन जायगा।

क्रोध निवारण का उपाय :

□क्रोध आने पर मौन रहो। जिसके प्रति आया है उसके सामने से हट जाओ। किसी के कुछ कहने पर अथवा अन्य किसी कारण

से क्रोध आने पर स्वतन्त्र होकर अलग जा बैठो, ईश प्रार्थना का मत्र जपो।

क्रोध सयम :

□ क्रोध मे हो तो वोलने से पहले दस तक गिनो, अगर वहुत क्रोध मे हो तो सौ तक।

क्रमिक विकास :

□ प्रथम साधक जीव और अजीव तथा उनकी गतियो को जानता है। उसके वाद पुण्य, पाप, वन्ध और मोक्ष को भी जानता है। यह जानने के वाद वह भोगो मे विरक्त होता है। और वाह्य तथा आभ्यन्तर सयोगो को त्याग कर मुनि वनता है। मुनि वनने के वाद वह उत्कृष्ट सवरात्मक अनुत्तर-धर्म का स्पर्श करता है। और अवोधिरूप पाप द्वारा सचित कर्मरज को प्रकम्पित कर देता है। तदनन्तर वह सर्वत्रगामी ज्ञान और दर्शन को प्राप्त कर लेता है। सम्पूर्ण ज्ञाता और दर्शक वन कर योग का निरोध कर शैलेशी अवस्था को प्राप्त होता है और कर्मों का क्षय कर मुक्त वन सिद्धि को प्राप्त करता है। सिद्धि को प्राप्त कर वह लोक के मस्तक पर स्थित शाश्वत स्थान पर विराजमान हो जाता है। और फिर कभी भी पुनरागमन नही करता।

खण्डन-मण्डन :

□ वस्तु को वस्तु के रूप मे जानने के वाद खण्डन मण्डन की

कतई आवश्यकता नही रहती ।

खानदानी :

☐खानदानी बाजार मे नही, वश परम्परा मे मिलती है ।

खाली हृदय :

☐एक किसान खेत मे दिन भर मेहनत करके खेत को पानी से भर देता है, किन्तु बाद मे जाकर देखता है कि खेत सारा का सारा खाली है । पानी छिद्रो प्रछिद्रों से बह जाता था । उसी प्रकार मानव दिनभर सन्तों की वाणी सुनकर अपने हृदय रूपी खेत मे पानी डालता है किन्तु वासना, लोभ और अहकार के छिद्रो से वह सारा का सारा बह जाता है । आत्मा . को सुजला सुफलां बनाने से वचित रह जाता है ।

☐लोहा जब तपाया जाता है तब तक लाल रहता है किंतु जब बाहर आता है तब शीतल पानी और हवा से काला पड जाता हैं । यही स्थिति सासारिक मनुष्यो की है । जब तक वह सन्तो की सगति मे धार्मिक स्थानो मे रहता है तब तक पवित्र रहता है किन्तु बाहर आते ही जैसा का वैसा हो जाता है ।

खूबसूरत :

☐याद रखो कि दुनिया मे सबसे ज्यादा खूबसूरत चीजे सबसे ज्यादा निकम्मी होती है, जैसे मोर और कमल ।

खुशी दो :

□यदि तुम खुशी चाहते हो तो अपनी खुशी दूसरो को भी दो वह खुशी अपने आप तुम्हारे पास लौट आयेगी।

खेदजनक :

□जिनको हम कह सकते हैं उनको कहने के लिए हम तैयार नही, किन्तु जिनको हम नही कह सकते है उनको कहने के लिए उत्कठित है कितनी शर्मनाक बात है !

ख्याति की तृषा :

□ख्याति वह तृषा है जो कभी नही बुझती। अगस्त्य ऋषि की तरह वह सागर को पीकर भी शान्त नही होती।

गतिशील :

□सूर्य समुद्र से जलग्रहण करता है; किन्तु उसे वर्षा ऋतु मे लौटाने के लिए। तुम भी आदान-प्रदान के एक यन्त्रमात्र हो। तुम ग्रहण करते हो, ताकि तुम दे सको। अत. बदले मे कुछ मागो मत; क्योंकि तुम जितना अधिक दोगे, उतना ही अधिक पाओगे। नदी का प्रवाह सतत समुद्र मे गिर रहा है और सतत भरता जा रहा है। उसका समुद्र मे गिरने का द्वार अवरुद्ध मत करो जिस क्षण तुम यह करोगे, मृत्यु तुम्हे पकड लेगी।

गम्भीरता :

□गम्भीर व्यक्ति किसी भी अवस्था मे अपनी गम्भीरता नही

छोड़ते, किन्तु जो उछले पेट का होगा वह तनिकसी बात पर उछल जायेगा अतः उसे छेड़ो मत। झालर को छुओ ही मत, तो उसमें आवाज होने का सवाल ही नही पैदा होगा।

ग्रहण शक्ति :

☐संसार मे गन्दे और स्वच्छ दोनो प्रकार की पानी की नालियां हर समय बहती हैं। किन्तु मन की टकी मे स्वच्छ पानी ही आये, गन्दा नही, इसका ध्यान रखना चाहिए।

गरीबी :

☐गरीबी सज्जनता की कसौटी है और मित्रता की परीक्षा।

गलतियाँ :

☐पुरुषों की गलतियो मे उनकी स्वार्थपरता निहित रहती है, नारियों की त्रुटियो के मूल मे उनकी दुर्बलता।

☐मैंने जो थोड़ी-बहुत दुनियां देखी है उससे मैंने यही सीखा है कि दूसरो की गलतियो पर अफसोस करूँ न कि गुस्सा।

☐भूल करना मनुष्य का स्वभाव है। की हुई भूल को स्वीकार कर लेना एवं वैसी भूल फिर न करने का प्रयास करना वीर एव शूर होने का प्रतीक है।

गहरी चोट :

☐जो शान्तिपूर्वक सब कुछ सह लेते हैं, उनके बारे मे यह बिलकुल निश्चित है कि उन्हे आन्तरिक चोट गहरी पहुंची होती है।

गिरने का भय :

☐जो जितना जल्दी ऊंचा चढता है उसे गिरने का भय भी उतना ही है। अत चढने के बाद गिरने से बचना ही बुद्धिमानी है।

गुण :

☐प्राणी की महत्ता उसके गुणो से होती है, ऊंचे आसन पर बैठने मे नही। कौवा क्या महल के शिखर पर बैठने से गरुड के समान हो जाता है?

☐यदि गुण शत्रु के भी हो तो उसका बखान करना चाहिए।

☐गुणवान मनुष्य के गुण स्वय प्रकाशित हो जाते है उन्हे प्रसिद्धि की आवश्यकता नही रहती। कस्तूरी की सुगन्ध को शपथ से नही बताया जाता।

गुणी

☐गुणी मनुष्य अपनी प्रशसा स्वय नही करते बल्कि दूसरो से अपनी प्रशसा सुनकर नम्र हो जाते है।

गुण और दोष :

☐ससार मे गुण भी है तो दोष भी है। दोष को देखने वाला दोषी बनता है तो गुणो को देखने वाला गुणी।

☐जो गुण दोष का कारण है, वह वस्तुत गुण होते हुए भी दोष ही है। और वह दोष भी गुण है, जिसका की परिणाम

सुन्दर है अर्थात् जो गुण का कारण है।

गुण-दोष के कारण :

☐ मन, वचन और काया के तीनो योग अविवेकी के लिए दोष के कारण है और विवेकी के लिए गुण के कारण।

गुणग्रहण :

☐ मधु मक्षिका की तरह गुलाब से मधु ले लो और कांटे को छोड दो।

गुणदर्शन :

☐ दूसरों के गुणो को देखते रहो, तुम्हारे दोष अपने आप चले जायेंगे।

गुणवान :

☐ इनसान दौलत से वडा नही किन्तु गुणो से बड़ा होता है। हाथी की झूल पहनने से कही गधा भी हाथी हो सकता है ?

☐ प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे सहानुभूति, शालीनता, मृदुता और और न्याय-परता रही है। जिनमे इन सद्गुणो का अभाव है तो वह मनुष्य ही नही पशु के समान है। प्रेम मानव का हृदय और सद्विचार उसका पथ है।

☐ गुणवान ही गुणी जनों को पहचान सकता है, निर्गुणी गुणवान को नही पहचान सकता।

गुणो की पूजा

☐लोग प्राणियो के गुणो का सम्मान करते है, केवल जाति का कही भी नही। टूटा हुआ काच का वर्तन कौडी के दाम मे भी नही विकता।

गुणों की सुगन्ध :

☐पुष्पो की सुगन्ध हवा के रुख के अनुसार अपनी दिशा निर्दिष्ट करती है हवा के साथ साथ फूल अपना मकरद विखेर देते है। किन्तु गुणशील व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को हवा के प्रतिकूल भी प्रवाहित करता है।

गुप्त अपराध :

☐चरित्रहीन की मानसिक यत्रणाए नरक की यत्रणाओ से बढ़ कर है।

☐आमरणात् कि शल्य ? प्रच्छन्न यत् कृतमकार्यम् ॥
जीवन पर्यन्त हृदय मे काटे की तरह क्या चुभता है ? छिपकर कियागया अपराध।

गुप्तदान ·

☐महात्मा ईसा कहते है—"जो तुम दाहिने हाथ से दान देते हो उसका पता वाए हाथ को भी न लगे।"

गुप्तभेद

☐अपने शुभकार्यों को गुप्त रखना चाहिए। उसका प्रचार करने

से अहवृत्ति जागृत होती है । और सत्कार्य निष्फल हो जाते हैं।

गुप्तरहस्य :

☐देशकाल और व्यक्ति को समझ कर ही गुप्तरहस्य प्रकट करना चाहिए ।

गुलाम .

☐जिसकी अपनी कोई राय नही, वल्कि दूसरो की राय और रुचि पर निर्भर रहता है, वह गुलाम है ।

गुलामी :

☐पर-पुरुप की गुलामी की अपेक्षा पर विचारो की गुलामी भयकर है । क्योकि विचार-गुलामी को वह पहिचान नही सकता । यही तो खतरनाक है ।

घटता नहीं, किन्तु बढ़ता है :

☐दान से धन घटता नही किन्तु वढ़ता है । भूलो को माफ करने से इज्जत घटती नही, किन्तु वढती है। नम्रता से मान घटता नही किन्तु वढ़ता है। विद्यादान से विद्या घटती नही किन्तु वढती है।

घनिष्ठता :

☐अधिक घनिष्टता ही घृणा की जन्मदात्री है।

घबराहट :

□घबराहट से मनुष्य की कार्यशक्ति का आधा बल क्षीण हो जाता है और शेष रहा आधा बल घबराहट मे बिगडे हुए कार्यों को सुधारने मे लग जाता है। इस प्रकार घबराहट का कुल नतीजा अकर्मण्यता या शून्यता होता है।

घमण्ड :

□घमण्ड से आदमी फूल सकता है, फैल नही सकता। घमण्ड की हवा से फुटबाल ठोकरे खाता है।

□घमण्डी का सिर नीचा रहता है। घमण्ड करने वाला व्यक्ति अवश्यमेव नीचे गिरता है।

□अत्यन्त क्षुद्र व्यक्तियो का घमण्ड अत्यन्त महान होता है।

घर :

□आपका अपने घर मे कर्त्तव्य भी है, अधिकार भी है, घर को स्वर्ग बनाना है तो कर्त्तव्य का सूत्र अपनाना पड़ेगा। इसलिए कि आप उसके मालिक हैं।

घर एक पाठशाला है :

□जीवन को बनाने वाली पाठशाला गृहस्थाश्रम है। तत्त्वज्ञान प्राप्त करने वाली पाठशाला भी घर ही है। पुस्तको या शास्त्रो से जो तत्त्वज्ञान नही मिलता वह घर से मिलता है।

घृणा

☐घृणा मनुष्य के लिए मौलिक पाप है और महान अपराध।

☐घृणा करना राक्षस का कार्य है। क्षमा करना मनुष्य का धर्म है, प्रेम करना देवताओ का गुण है।

☐घृणा पाप से होनी चाहिए, पापी से नही।

☐घृणा का जहर प्रेम के अमृत से मिटा दो।

☐घृणा कैंची है, प्रेम सूई।

☐दूसरो से घृणा करने वाला, संसार में स्वयं घृणित समझा जायेगा।

○○

च

चतुर्मुख ब्रह्मा :

□ विवेक के साथ धन, ... है, लेकिन आप उसके मुह से अपनी ... सी करता है क्योंकि वह

मधुरता संसार ... ूल नही समाते ।

चरित्र

□ ज्ञान ... की रक्षा समुद्र करता है । घर की रक्षा चार दीवारे

चरि ... रती है । देश की रक्षा शासक करता है तो मानव की रक्षा उसका चारित्र करता है ।

□ बुद्धिमान का दुनियाँ सम्मान करती है । चरित्रवान का अनुसरण करती है ।

□ जिस प्रकार सूखे घास और खोखले काष्ठ को अग्नि शीघ्र जला कर भस्म कर डालती है । उसी प्रकार शुद्ध चारित्र से साधक अपने कर्मों को शीघ्र जला डालता है ।

उसको समझते है और तीसरा जैसाकि वह वास्तव में होता है ।

□हजारदिन का यश एकदिन के चरित्रपर निर्भर रहना है ।

□चरित्र एक शक्ति है, प्रभाव है; वह मित्र उत्पन्न करता है, सहायता और सरक्षक प्राप्त करता है, और धन तथा सुख का [illegible]श्चित मार्ग खोल देता है ।

□धृ [illegible] र यश

□दूसरो से पृ [illegible] भीतर रहता है और यश बाहर ।

जायेगा ।

[illegible]र्म-प्रचार मे खर्च किया,

[illegible]ने चरित्र-निर्माण

[illegible]की कल्पना

है। जो स्वय सोया रहता है, उसका सौभाग्य भी सोता रहता है, जो उठकर चल पडता है, उसका सौभाग्य भी सक्रिय हो जाता है—इसलिये चलते रहो, चलते रहो। चरैवेति, चरैवेति, चरैवेति।

□पडे-सोते रहना कलियुग है, चलते रहना ही द्वापर है, उठ बैठना ही त्रेता है और चल पडना ही सतयुग है। अतः चलते रहो, चलते रहो।

चापलूस .

□चापलूस इसलिए आपकी चापलूसी करता है क्योंकि वह आपको अयोग्य समझता है, लेकिन आप उसके मुह से अपनी प्रशसा सुनकर फूले नही समाते।

चारित्र :

□पृथ्वी की रक्षा समुद्र करता है। घर की रक्षा चार दीवारें करती है। देश की रक्षा शासक करता है तो मानव की रक्षा उसका चारित्र करता है।

□बुद्धिमान का दुनियां सम्मान करती है। चरित्रवान का अनुसरण करती है।

□जिस प्रकार सूखे घास और खोखले काष्ठ को अग्नि शीघ्र जला कर भस्म कर डालती है। उसी प्रकार शुद्ध चारित्र से साधक अपने कर्मों को शीघ्र जला डालता है।

चारित्र विराधना :

☐चारित्र का अर्थ है—'सच्चरण'। अहिंसा, सत्य आदि चारित्र का भलीभाँति पालन न करना, उसमे दोष लगाना, उसका खण्डन करना, चारित्र विराधना है।

चारित्रवान :

☐पराई वस्तु चाहे जितनी सुन्दर और आकर्षक क्यो न हो उसे देखकर यदि तुम्हारा मन तनिक भी विचलित नही होता है तो समझलो कि तुम चारित्रवान हो।

चाह :

☐तुझे बन्धु मित्र चाहिये तो ईश्वर काफी है; सगी चाहिए तो विधाता है, मान प्रतिष्ठा चाहिए तो दुनिया काफी है; सान्त्वना चाहिए तो धर्म पुस्तक काफी है; उपदेश चाहिए तो मौत की याद काफी है; और अगर मेरा कहना गले नही उतरता हो तो फिर तेरे लिए नरक काफी है।

चिकित्सक .

☐सयम और परिश्रम मनुष्य के दो सर्वोत्तम चिकित्सक है।

चित्त :

☐सप्त धातुओ से बना शरीर मन के आधीन है। हृदय क्षीण होने से धातुये भी क्षीण हो जाती है, इसलिए चित्त की प्रत्येक क्षण रक्षा करनी चाहिए। चित्त के स्वस्थ रहने से ही बुद्धि

प्रस्फुटित होती है।

चित्त की प्रसन्नता .

□ चित्त की प्रसन्नता ही व्यवहार मे उदारता बन जाती हैं।

चिन्तन और चिन्ता

□ आवश्यक और किसी गहन विषय पर सोचना चिन्तन है। अनावश्यक भूत भविष्य का चिन्तन करना चिन्ता है।

चिन्ता

□ चिन्ता से ही चिन्ता दूर होती है—इस धोखे से रोकने का प्रयास करने से परिणाम उलटा होता है।

□ चिन्ता एक प्रकार की कायरता है और वह जीवन को विष-मय बना देती है।

□ मनुष्य को जिन्दा निगलने वाली डायन चिन्ता है।

□ चिन्ता घूमती हुई कुर्सी है जो आपको ऊपर नीचे चारो तरफ घुमाती रहेगी किन्तु निश्चित स्थान पर नही पहुँचा सकेगी।

□ चिन्ता अमरवेल के समान है। अमरवेल जिस वृक्ष पर चढती है उसका शोषण कर जाती है और स्वय पुष्ट रहती है। उसी प्रकार चिन्ता जिस पर सवार होती है वह उसी का शोपण कर उसे नष्ट कर देती है और स्वयं पुष्ट हो जाती है।

चिन्ता और चाह :

□ चिन्ता जीवन वृक्ष का कीडा है, जो उसे अन्दर से खोखला

बनाता है। जब तक चाह नही होगी तब तक चिन्ता नही हटेगी। चाह और चिन्ता एक दूसरे के पूरक है।

चिन्ताजनक

☐धन या शरीर का नाश होना उतना चिन्ताजनक नही, जितना चरित्र का नाश।

चुगलखोर

☐जैसे ऊँट को किसी वृक्ष के फूल-फल से अनुराग नही होता उसे काटो का ढेर हो अभीष्ट होता है, वैसे ही गुणियो मे अनेकानेक गुणो के वर्तमान रहने पर भी चुगलखोर उनमे दोष ही ढूंढता है और ग्रहण करता है।

चेतना :

☐जीवित व्यक्ति को स्वस्थ किया जा सकता है, पर जिसमे प्राण ही नही उसको क्या स्वस्थ किया जाय ?

☐सघर्षशील जीवन मे चेतना होती है, सुस्त जीवन मे मुर्दापन।

चेहरा :

☐हमारे मुखमण्डल पर हमारे अतर्हृदय की विचारणा का प्रतिविम्ब झलकता है।

☐तुम्हारा चेहरा प्राय: कपडो की अपेक्षा भी अधिक मन की दशा बता देता है।

चोट :

☐जिसने तुम्हे चोट पहुचाई है वह तुम से प्रवल था या निर्वल ? यदि तुमसे निर्वल है तो उसे क्षमा कर दो यदि प्रवल है तो अपने को कष्ट न दो ।

चोर ·

☐चोर केवल दण्ड से ही नही वचना चाहता, वह अपमान से भी वचना चाहता है । वह दण्ड से उतना नही डरता जितना अपमान से ।

छल

☐सभी छलो मे अपने साथ किया हुआ छल प्रथम और निकृष्ट होता है ।

छिपा है ·

☐यौवन मे वुढापा छिपा है, आरोग्य मे रोग छिपा है ओर जीवन मे मृत्यु छिपी हे ।

छोटी जिन्दगी

☐जिन्दगी छोटी है । मैं उसे शत्रुता वनाये रखने या अपराधो की याद मे नही गुजारना चाहता ।

जड़े मजवूत हो .

☐जिस वृक्ष की जडे मजवूत है वे भयकर झझावात मे भी खडे रहते है गिरते नही । उसी प्रकार जिस साधक का चरित्र मज-

वृत है वह विपय वासना के भयकर झंझावात मे भी अडिग रहता है। पतित नही होता।

जय-पराजय :

☐सर्वत्र जय मिलेगी यह नही हो सकता। सर्वत्र पराजय होगी यह भी असम्भव है। जय-पराजय ज्ञानियो के लिए समान है। अज्ञानियों के लिए सुख-दुःख का कारण है।

जन्म और मृत्यु :

☐मृत्यु से मत डरो। यह तो तुम्हे नया शरीर देने वाला है। जैसे मनुष्य जीर्ण वस्त्र का परित्याग करके नये वस्त्र धारण करता है। वैसे ही मृत्यु जीर्ण देह को छोडकर नया देह प्रदान करती है। मृत्यु का अर्थ आत्मा का नष्ट होना नही, किंतु देह परिवर्तन है।

जागृति :

☐जागृति का अर्थ है कर्म क्षेत्र मे अवतीर्ण होना और कर्मक्षेत्र क्या है ? जीवन संग्राम।

जाति भाई :

☐ससार मे व्यक्ति को जाति भाई ही तराते हे और जाति भाई ही डुवोते भी हैं। जो सदाचारी हैं, वे तो तराते हैं और दुराचारी डुवो देते हैं।

जिन्दगी

□ जिन्दगी कितनी ही बडी हो, वक्त की बर्बादी से जितनी चाहे छोटी बनाई जा सकती है।

□ कहानी की तरह, जिन्दगी मे यह देखा जाये कि वह कितनी अच्छी है न कि कितनी लम्बी है।

जिज्ञासा :

□ जिज्ञासा के बिना ज्ञान नही।

जितेन्द्रिय

□ तृष्णा और प्रलोभन से जो अपने आप को बचाता है वह जितेन्द्रिय है।

जिह्वा :

□ जिह्वा सरस्वती का मन्दिर है, नागदेवता का अधिष्ठान है, इसलिए उसे सदा पवित्र रखना चाहिए।

□ जीव और जिव्हा का अटूट सम्बन्ध है। जीव को सुख दुख देने मे कारणीभूत जिव्हा होती है। जिव्हा अमृत है तो विप भी है। अन्य इन्द्रियाँ शरीर के साथ-साथ कार्यहीन हो जाती है किंतु जिव्हा तो मृत्यु तक जीव का साथ देती है।

□ मनुष्य की वृद्धि और विनाश, उन्नति और अवनति, जिव्हा के आधीन है।

जीना व्यर्थ :

☐यदि हम एक दूसरे की जिन्दगी की मुश्किले आसान नही करते तो फिर हम जीते ही किसलिए है ?

जीभ :

☐जिसने मुँह वन्द रखा उसने अमृत पिया, जिसने जीभ को काबू मे कर लिया उसने शैतान को काबू मे कर लिया और जिसने शब्दो को वुहार फेका उसने अपने दिल को कावा वना लिया।

जीव और शिव

☐किसी भी पदार्थ के प्रति जव आत्मा ममत्व करता है तव वह जीव रूप होता है। निर्ममत्व भाव मे वह शुद्धरूप शिव रूप होता है।

जीवन :

☐जीवन का ध्येय त्याग है, भोग नही, श्रेय है प्रेय नही, वैराग्य है, विलास नही, प्रेम है, प्रहार नही।

☐महत्त्व इसका नही है कि हम कितने अधिक जीवित रहते है अपितु महत्त्व तो इसका है कि हम कैसे जीवित रहते है।

☐जीवन मरने के लिए नही है किन्तु मौत को जीतने के लिए है।

☐जीवन है स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन का स्वस्थ सयोग।

☐ईसा का कहना है"रहो और रहने दो। जीयो और जीने दो।"

☐जीवन को मृत्यु का भय है। अत मनीषी लोग अपने जीवन को भव्य और दिव्य बनाने मे सतत प्रयत्नशील रहते है।

☐जितना अधिक जीवित रहना चाहते हो, रहो, किन्तु स्मरण रखो कि जीवन के प्रारम्भिक तीस वर्ष जीवन की अधिकाश अवधि है।

☐तुम भद्र मे भद्रतर जीवन को प्राप्त करो।

वीणा के तारो को न तो इतना खीचो कि टूटने का भय बना रहे न इतना ढीला छोडो कि मधुर की स्वर लहरी न निकले। हमारा जीवन भी ऐसा ही होना चाहिए।

☐पवित्र जीवन एक आवाज है, वह तब बोलती है जब जवान खामोश होती है।

☐जीवन एक फूल है और प्रेम उसका मधु।

☐जीवन का एक क्षण भी अमूल्य है, क्यो कि वह करोड स्वर्ण मुद्राये देने मे भी नही मिलता।

☐ससार मे सम्मानपूर्वक जीने का सबसे सरल और सुन्दर उपाय यह है कि हम जो कुछ बाहर से दिखाना चाहते है, वैसे अन्दर मे भी दिखे अन्तर्-बाहर एकसा हो।

☐जीवन एक खेल है और मानव एक खिलाडी।

☐मनुष्य जीवन अनुभव का शास्त्र है।

☐जीवन किसी को स्थायी सम्पत्ति के रूप में नही मिला। वह तो केवल प्रयोग के लिए है।

☐जीवन अमरता का शैशवकाल है।

जीवनी :

☐प्राचीन महापुरुषो की जीवनी से अपरिचित रहना जीवन भर निरन्तर वाल्यावस्था मे ही रहना है।

जीवन और मृत्यु :

☐जीवन एक पुष्प है जो खिलता भी है तो मुरझाता भी है। मानव जीवन मे सुख भी मिलता है तो दुःख भी। मृत्यु इन दोनों से छुटकारा देने में समर्थ है।

जीवन का आनन्द :

☐काटों के मध्य रह कर जो मुस्कुरा सकता है, जीवन का आनन्द प्राप्त कर सकता है वही फूल वन सकता हैऔर अपना सौरभ फैला सकता है।

जीवन का राजमार्ग :

☐विवेक से वोलो, विवेक से चलो, विवेक से खाओ, विवेक से सोओ और विवेक से वैठो, तुम्हे पाप का वन्ध न होगा। क्योंकि विवेक ही धर्म हैं। विवेकशील के वन्धन भी मुक्ति के कारण हैं। यही जीवन का राजमार्ग है।

जीवन की एकरूपता

☐मानव को सतत समान रूप से व्यवहार करना चाहिए। यह नही कि वाहर कुछ और भीतर कुछ। "जहा अतो तहा वाहि" का सिद्धान्त मानवता को प्रकट करता है।

जीवन की चंचलता :

☐जीवन पानी के वुलवुले के समान और कुश की नोक पर स्थित जल-विन्दु के समान चंचल है।

जीवन की परिपूर्णता

☐भावना, ज्ञान, और कर्म इन तीनो के मेल से जीवन परिपूर्ण होता है।

जीवन की परिभाषा :

☐आदम नवी के मत मे जीवन एक परीक्षा का स्थल है। नूह नवी के मत मे जीवन एक अर्क है। इब्राहिम नवी के मत मे जीवन खुदा के प्रति प्रेम प्रकट करने का एक साधन है। मूसानवी के मत मे जीवन एक सग्रामस्थल है। ईसानवी के मत मे जीवन समस्त मानवो से प्रेम करने वाला साधन है।

जीवन की सार्थकता :

☐प्रेममूर्ति वना रहना इसी मे जीवन की सार्थकता है।

जीवन नाटक

☐जिस प्रकार नाटक मे क्षण-क्षण मे दृश्य वदलते रहते है उसी

प्रकार जीवन रूप नाटक मे हर्ष शोक, चिन्ता, सुख-दुःख व आनन्द के दृश्य परिवर्तित होते रहते है।

जीवन में शक्ति-सम्पन्नता :

☐आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसयम केवल यही तीन जीवन को परम शक्ति-सम्पन्न बना देते है।

जीवन-संगीत .

☐जीवन-सगीत के दो स्वर है—एक कठोरता व दूसरी मृदुता जो व्यक्ति इन दोनो का समुचित उपयोग करना जानता है, वही जीवन का मधुरगीत गा सकता है।

जीवन्मुक्त .

☐जीवन्मुक्त ज्ञानी, अभिमान और द्वन्द्वो से रहित होता है, आत्मा मे ही रमण करता है और वह आत्मसाक्षात्कार करता हुआ सब पर समान दृष्टि रखता है।

☐किसी भी शुभ अशुभ को याद करके, उसका स्पर्शकरके, उनको खा-करके अथवा जानकार भी जो हर्ष या दु ख का अनुभव नही करता वह जीवनन्मुक्त होता है।

☐सज्जन पूजा करे या दुर्जन अपमान करे, सुखदे या दु ख दे, फिर जो भी दोनो मे समभाव रखता है वही जीवन्मुक्त है।

जीवात्मा और परमात्मा

☐कर्मबद्ध आत्मा-जीवात्मा है। कर्ममुक्त आत्मा-परमात्मा है।

"पाशबद्धो भवेज्जीव: पाशमुक्तो भवेत्शिव:"

जीवो और मरो

☐धर्म के लिये जीवो और धर्म के लिए मरो।

जैन-दर्शन

☐जैन-दर्शन न एकान्त भेदभाव को ही मानता है और न अभेद वाद को ही। वह भेदाभेदवादी दर्शन है।

जैसा विचार वैसा जीवन

☐आपका भविष्य आपके वर्तमान जीवन के विचारो से प्रभावित है जो आप वर्तमान समय मे सोचते विचारते है, वैसे ही आप बन जायेंगे। नीच विचार मनुष्य को पतन की ओर और उच्च विचार उन्नति की ओर ले जाते है। मनुष्य का जीवन विचारो का प्रतिविम्ब है। एक विचारक के शब्दो मे भाग्य का अपर नाम विचार है।

झगड़ा

☐यदि तुम झगडे का अवसर देखो तो तुरन्त वहाँ से हट जाओ क्योकि तुम्हारी खामोशी या स्थान परिवर्तन झगडे का फाटक बन्द कर देगी।

झूठ

☐ससार मे झूठ पापो का सरदार है, स्वार्थपरता, निर्दयता, कुटिलता और कायरता सब उसके साथी।

□लोग झूठ बोलने वाले मनुष्य से उसी प्रकार डरते हैं जैसे सांप से। ससार मे सत्य ही सबसे महान धर्म है। वही सबका मूल कहा जाता है।

□अधर्म की सेना का सेनापति झूठ है, जहा झूठ पहुच जाता है वहाँ अधर्म राज्य की विजय-दुदुभी अवश्य बजती है।

झूठा :

□झूठा कभी श्रेष्ठ पद को प्राप्त नही होता।

□झूठे से देव और मनुष्य दोनो घृणा करते है। झूठा अक्सर बुजदिल होता है, क्योकि वह सचाई को स्वीकार करने की हिम्मत नही करता।

ढोंगी :

□ढोगी बनने की अपेक्षा नास्तिक बनना अधिक श्रेष्ठ है। ००

तकदीर और तदवीर :

☐तकदीर अपने स्थान पर महान है; मन्दे तकदीर को प्रकट करने के लिए तदवीर की परम आवश्यकता है।

तत्त्वसार :

☐ज्ञानी मनोज्ञ या अमनोज्ञ सभी पदार्थ से सार ग्रहण करते हैं। मधुप अर्कपुष्प (आकडे का फूल) से भी पराग ग्रहण कर लेता है।

तन्मयता :

☐तन्मयता के तीन रूप हैं—काम, भक्ति और ध्यान। स्त्री विषयक तन्मयता काम है। ईश्वर विषयक तन्मयता भक्ति है और

आत्म-विषयक तन्मयता ध्यान है।

तप :

☐सघनमेघ की घटा जैसे तीव्र वायु के वेग से बिखर जाती है वैसे ही पाप की श्रेणी तपस्या से छिन्न-भिन्न हो जाती है।

☐यदि आत्मशक्ति प्राप्त करनी है तो इच्छा का निरोध करना होगा। क्योंकि योग शास्त्र मे इच्छा निरोध को तप बताया है।

☐वही अनशन (उपवास) तप श्रेष्ठ है, जिससे कि मन अमगल न सोचे। इन्द्रियो की हानि न हो और नित्य प्रति की योग-धर्म-क्रियाओ मे विघ्न न आये।

☐अनासक्ति ही तप है।

तपसमाधि :

☐तप समाधि के चार प्रकार होते है—इस लोक के निमित्त, परलोक के निमित्त, कीर्ति, वर्ण, शब्द और लोक प्रशसा के लिए, निर्जरा के अतिरिक्त अन्य किसी भी उद्देश्य से तप नही करना चाहिए।

तपस्वी :

☐सच्चा तपस्वी क्रोध, वैर, ईर्ष्या मात्सर्य, और अहकार रहित होता है।

तर्क और सत्य :

☐तर्क और सत्य का उल्लघन शास्त्र भी नही कर सकते।

शास्त्रों का उपयोग तर्क को शुद्ध करने और सत्य को चमकाने के लिए होता है।

तलवार :

☐तलवार मनुष्य के शरीर को झुका सकती है, मन को नही। मन को झुकाना हो तो प्रेम का अस्त्र उठाओ। प्रेम का अस्त्र अजेय है, अचूक है।

तस्कर :

☐जिसके चेहरे पर परिश्रम का स्वेद कण व ईमानदारी का धूल कण नही, वह समाज का तस्कर व लुटेरा है।

ताजा आनन्द :

☐जिस प्रकार उद्यान मे नवोदित पुष्प की सुगन्ध निराली होती है उसी प्रकार अन्तर मे उदित आनन्द की सुगन्ध भी निराली ही होती है।

तितिक्षा :

☐जिस तरह आयुर्वेदीय दवाईयाँ शतपुटी अथवा सहस्रपुटी बनने से उनकी शक्ति वढती है, उसी प्रकार तितिक्षा द्वारा श्रद्धा और आस्तिकता के साथ सब कुछ सहन करते जाने से सत्य का साक्षात्कार अधिकाधिक नजदीक आता है और सत्य की आत्मिक-शक्ति वढती जाती है।

☐क्रोध और द्वेष का दमन करने से ही जैसे अहिंसा की प्रतिष्ठा

तीन वस्तुयें :

☐सत्संग, उत्तम ग्रन्थ का वाचन और प्रार्थना ये तीनों वस्तुये तीनो लोक का राज्य दिलाने मे सिद्धहस्त है। हमारा कुसंग परमेश्वर से हमे दूर करवा देता है, उसी के कारण हम पर नाना प्रकार के कष्ट आते हैं।

तीन शासक :

☐तीन सरल किन्तु प्रवल, आवेगो ने मानव जीवन पर शासन किया है—प्रेम की इच्छा, ज्ञान का अन्वेपण और पीडित जीवों की असह्य वेदना मे उत्पन्न करुणा।

तीर्थ :

☐जहाँ दान, विनय और शील का त्रिवेणी-संगम होता है, वही लोकप्रियता के पवित्र तीर्थ का सर्जन भी होता है।

तुच्छ :

☐जिस हृदय मे परमात्मा का चिन्तन नही है वह मनुष्य तुच्छ है।

☐जिसने पैसे के खातिर अपना ईमान वेच दिया है, उस तुच्छ व्यक्ति का चित्त कभी प्रसन्न नही रह सकता।

तुच्छ संगति .

☐तुच्छ व्यक्ति के साथ मैत्री और प्रेम कुछ भी नही करना चाहिए। कोयला यदि जलता हुआ है तो स्पर्श करने पर जला

देता है और यदि ठण्डा है तो हाथ काला कर देता है ।

तुम स्वयं बनो :

☐तुम अपने आपके गुरु, वकील और वैद्य बनो ।

तृष्णा :

☐डायोजिनस के लिए एक टब भी बहुत था, लेकिन एलेग्जैण्डर के लिए सारी दुनिया भी छोटी थी ।

☐हाथी का दन्तसूल एक बार बाहर निकलने के बाद पुनः अन्दर नही जा सकता, उसी प्रकार बढी हुई आवश्यकता एक बार बढने पर घट नही सकती ।

☐तृष्णा वन्धन को पैदा करती है । तृष्णा के नष्ट हो जाने पर सब वन्धन स्वय कट जाते है ।

☐यदि तुम्हारे हृदय मे तृष्णा की आग धधक रही है तो सन्तोप कैसे प्राप्त होगा? जहा ज्वालामुखी धधक रहा है वहा पुष्प खिलने की आशा कैसे की जा सकती है ?

☐जब तक हमारे मन से चाह-तृष्णा नही हटेगी, तब तक चिन्ता नही हटेगी । तृष्णा उस उपन्यास की तरह है जो एक पृष्ठ पढने पर दूसरे पृष्ठ को पढने की इच्छा होती है ।

☐मरुधरा मे तृपार्त मृग पानी के लिए इधर-उधर भटकते है । पानी के अभाव मे वे एक बार ही काल कवलित हो जाते है किन्तु ससारी जीव काम भोग की तृष्णा मे बार-बार काल कव-

लित हो अनन्त समार मे भटकते है ।

☐तृष्णा जीव की औरत है और इसकी तीन सन्ताने है—लोभ, मान और काम—ये तीनो दुःख की परम्परा बढाने वाली है। यदि इनका वन्ध्यीकरण किया जाय तो मानव निश्चित दु ख से मुक्त हो सकता है ।

☐वाहर की जलती हुई अग्नि को थोडे से जल से शान्त किया जा सकता है । किन्तु मोह अर्थात् तृष्णा रूप अग्नि को समस्त समुद्रो के जल से भी शान्त नही किया जा सकता ।

तेजस्वी :

☐जिधर सूर्य उदय होता है, उसी को लोग पूर्व दिशा मानते है । तेजस्वी जिधर झुकता है उधर लोक झुक जाता है, जहाँ वह रहता है वह साधारण स्थान भी तीर्थ वन जाता है ।

त्याग :

☐वहुजन हिताय, वहुजन सुखाय—अपनी वस्तु का कुल के लिए, कुल का ग्राम के लिए, ग्राम का प्रान्त के लिए, प्रान्त का देश के लिए एव देश का राष्ट्र के लिए त्याग कर देना चाहिए ।

☐जिसमे त्याग है, वही प्रसन्न है । वाकी सव गम का असवाव है ।

☐जिस त्याग मे सहज सुख की अनुभूति नही होती, वह त्याग नही । जव तक त्याग मे अभिमान है, उसकी स्मृति है, त्यागी

हुई वस्तु की महत्ता बनी हुई है तब तक वह त्याग स्वाभाविक नही है ।

☐ निरपेक्ष त्याग से ही चित्त की शुद्धि होती है । चित्त की शुद्धि से ही साधक कर्म क्षय कर निर्मलात्मा बनता है ।

☐ त्याग निश्चय ही आपके बल को बढा देता है । आपकी शक्तियो को कई गुना कर देता है । आपके पराक्रम को दृढ कर देता है, और इतना ही नही, आपको ईश्वर बना देता है । वह आपकी चिन्ताये, शोक और भय हर लेता है । आप निर्भय तथा आनन्दमय बन जाते है । त्याग है अहकार युक्त जीवन का त्याग । नि.सशय और नि सन्देह अमर जीवन, व्यक्तिगत और परिच्छिन्न जीवन को खो डालने से मिलता है ।

☐ त्याग का आरम्भ प्रिय वस्तुओ से करना चाहिए । जिसका त्याग परमावश्यक है वह है मिथ्या अहकार । अर्थात् मैने यह किया, यह कर रहा हू, मेरे अलावा यह कार्य कौन करने वाला है । मै कर्ता हूँ । भोक्ता हूँ यही भाव हम मे मिथ्या व्यक्तित्व को उत्पन्न करते है अतः हमे ऐसे भाव का त्याग करना चाहिए । अहकार युक्त जीवन का त्याग ही सौदर्य है ।

त्याग और स्वीकार :

☐ जो बुराई है उसका त्याग करो, जो भलाई है उसको स्वीकार कर पालन करो ।

त्यागी :

☐जो भोग उपभोग की सामग्री के न मिलने पर या परवश होकर जो उनका सेवन नही करता वह त्यागी नही कहलाता। त्यागी वह है, जो प्रिय भोग के उपलब्ध होने पर भी उनकी ओर से पीठ फेर लेता है और स्वाधीनतापूर्वक भोगो का त्याग करता है।

थपथपाओ तो द्वार खुल जायेंगे :

☐मांगो और वह तुम्हे मिलेगा, खोजो और तुम पाओगे। थप-थपाओ और द्वार तुम्हारे लिए खुल जायेंगे।'

थोथा चना बाजे घना :

☐जो व्यक्ति बकवास ज्यादा करता है, किन्तु करता कुछ नही वह व्यक्ति एक ऐसी नदी के समान है जहा रेती ही रेती है, किंतु पानी नही।

दमन :

☐अच्छा यही है कि मैं सयम और तप द्वारा अपनी आत्मा का दमन करूँ। दूसरे लोग बन्धन और वध के द्वारा मेरा दमन करें—यह अच्छा नही है।

☐सयम और तप से अपनी आत्मा का दमन करना अच्छा है। दूसरो के द्वारा बन्धन या वध से दमन पाना अच्छा नही।

दम्भ :

□ लोग बाते ऐसी करते है मानो वे ईश्वर मे विश्वास करते है, लेकिन ज्ञीते इस प्रकार हैं, मानो उनके खयाल से ईश्वर है ही नहीं ।

□ दम्भ का अन्त सदैव नाश होता है और अहकारी आत्मा सदैव पतित होती है ।

दया :

□ दाना चुगने वाली छोटी-सी चिटी को भी मत सता, क्योकि उसमे भी प्राण है । प्राण ससार की बेहतरीन वस्तु है । अतः किसी कमजोर प्राणि को देखकर उसे सताना पाप है ।

दरिद्रता :

□ अतिथि सत्कार से इनकार करना ही सबसे बडी दरिद्रता हैं ।

दरिद्रता के कारण :

□ जूआ, मद्यपान, व्यभिचार, हिंसा, बुरे मित्रो का ससर्ग, और आलस्य ये सब ऐश्वर्य के विनाश के कारण है ।

दर्शन विराधना :

□ सम्यक्त्व एव सम्यक्त्वी साधक की निन्दा करना, मिथ्यात्व एंव मिथ्यात्वी की प्रशसा करना, पाखण्डमत का आडम्बर देख-कर विचलित होना दर्शन विराधना है ।

दल नहीं, दिल देखो :

☐जनता का दल देखकर कोई काम मत करो, उनका दिल देखो।

दर्शन का ध्येय :

☐जो कुछ सत्य है उसका अन्वेषण और जो कुछ उचित है उसकी कार्य मे परिणति, ये दर्शन मे दो महान ध्येय है।

दाग :

☐वस्त्र पर दाग चन्दन और केशर के भी पड़ते है और कीचड के भी। प्रथम दाग पवित्र होता है जबकि द्वितीय अपवित्र।

दान :

☐दान सत्कारपूर्वक दो, अपने हाथ से दो, मन के प्रशस्तभाव मे दो, आत्म-कल्याण की भावना से दोषरहित दो।

☐अपने हाथों से तुमने जो सिक्का वृद्ध अशक्त व आवश्यकता से पीड़ित दरिद्र के हाथ मे दिया है वह सिक्का नही रहता वह, ईश्वरीय हृदय के साथ तुम्हारे हृदय को जोडने वाली स्वर्ण शृङ्खला बन जाती है।

☐सच्चा दान का अर्थ है ममता का त्याग। जब ममता का त्याग किया है तो फिर बदले की कामना क्यो की जाय? बदले की इच्छा से जो दान दिया जाता है उसका फल भी अल्प मिलता है और वह दान भी अशुद्ध हो जाता है।

☐प्रदीप के बुझने के बाद तैल का दान किस काम का ?

☐जो कुछ मैने दिया था वह मेरे पास अब भी है। जो कुछ व्यय किया वह विद्यमान था। जो सचित किया था वह मैने खो दिया।

☐ज्यो ही पर्स (बटुआ) रिक्त होता है, हृदय समृद्ध होता जाता है।

☐परवाह नही, यदि तुम्हारे पास दान के लिए धन नही है, किंतु अपाहिज की सेवा के लिए हाथ तो है।
परवाह नही, यदि तुम्हारे पास देने के लिए अन्न भण्डार नही, पर दो मीठे बोल तो दुखीजनो को दे ही सकते हो।
परवाह नही, यदि तुम सर्वथा निःस्व हो, अपने सामने कराहते मानव को अपने आँसू से, अपनी करुणा से नहला तो सकते हो।

दाता :

☐याचक मर जाता है, किन्तु दाता नहीं मरता।

दार्शनिक :

☐जब जिन्दगी को अपने दिल के गीत सुनाने के लिए गायन नही मिलता, तो वह अपने मन के विचार सुनाने के लिए दार्शनिक पैदा करता है।

दार्शनिकों से

☐दार्शनिको ! ईश्वर और जगत की पहेलियो को सुलझाने की

अपेक्षा भूख, गरीवी और अभाव से पीडित जनता की समस्या को सुलझाओ। तभी आपका दर्शन जन-दर्शन वन जायेगा।

दासता :

☐ जिस समय कोई व्यक्ति किसी की दासता स्वीकार करता है उसकी आधी योग्यता उसी समय नष्ट हो जाती है।

दिन और रात :

☐ तुम हसते हो, मुझे रोना आता है, तुम रोते हो मुझे हँसी आ जाती है, दिन और रात इसी को कहते है।

दीन :

☐ विपन्नावस्था मे फँसा व्यक्ति सम्पन्न व्यक्तियो को उसी दृष्टि से देखता है जिस दृष्टि से क्षुधातुर व्यक्ति भोजन को।

दिल्लगी :

☐ जिसको लगती है उसी को लगती है, औरो को दिल्लगी सूझती है।

दीर्घजीवन ·

☐ दीर्घ जीवन के लिए उतावलापन शत्रु है। विशाल आकाक्षाएँ थकावट है, आलस्य और निकम्मापन वीमारी है।

दीर्घायुभव .

☐ जीवेम शरदः शतम्। वुध्येम शरद· शतम्। रोहेम शरदः शतम्। पूपेम शरद शतम्। भवेम शरद. शतम्। भूपेम शरद

शतम् । भूयसी: शरद: शतात् [अथर्ववेद १६।६७।२-८]
हम सौ और सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवन-यात्रा करे, अपने ज्ञान को बराबर बढाते रहे, उत्तरोत्तर उत्कृष्ट उन्नति को प्राप्त करते रहे, पुष्टि और दृढता को प्राप्त करते रहे, आनन्द-मय जीवन व्यतीत करते रहे, और समृद्धि, ऐश्वर्य तथा सद्गुणो से अपने को भूषित करते रहे ।

दीक्षा :

☐घास और सोने मे जब समान बुद्धि रहती है, तभी उसे दीक्षा कहा जाता है ।

दुख :

☐मनुष्य का सच्चा जीवन दु:ख मे खिलता है । दु:ख मनुष्य के विकास का साधन है । सोने के तपाने से निखरता है । मनुष्य की सच्ची प्रतिभा दु:ख मे ही निखरती है ।

☐दु:ख ही लोगो को कृपालु बनाता है और दूसरो पर दया करना सिखाता है ।

☐आसक्ति से बढकर दु:ख नही और अनासक्ति से बढकर सुख नही ।

☐सबसे सुन्दर मुकुट पृथ्वी पर सदैव कण्टको का रहा है और कटको का ही रहेगा ।

☐दु:ख वर्षा की धारा की भाति कीचड उत्पन्न करता है, किन्तु

गुलाव के फूल भी खिलाता है।

दुःख का कारण :

□सचय ही दु ख का कारण है, उत्सर्ग और समर्पण ही आनन्द का राजमार्ग है।

दुःख की परिभाषा :

□दु:ख की सक्षिप्त व्याख्या मात्र इतनी ही है—अभाव का अनुभव और मनोवाछित की अप्राप्ति।

दु.ख मुक्ति :

□वस्तुमात्र की उपलब्धि मे तीन प्रकार का दु.ख भरा हुआ है—प्राप्त करने का दु ख, प्राप्त करने के वाद उसकी रक्षा का दु:ख, और खोने का दुःख। अपनी आवश्यकतानुसार कमाने वाला अन्तिम दो दु:खो से मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

दुःखनान्द :

□दु:ख मे सुख कव मिलेगा ? यदि दुःखी व्यक्ति को सुखी मिलता है तो दुःख की मात्रा मे वृद्धि करता है। यदि दुःखी को दुःखी मिलता है तो सुख मे अभिवृद्धि होती है। सोचता है दुनिया मे केवल मै अकेला ही दुःखी नही हू और भी दुःखी है।

दुःखानुभव .

□जिस मानव ने एक वार भी दुःख का अनुभव नही किया है वह भी वेचारा अभागा है। दुःख का अनुभव होने पर हृदय

कोमल होता है। मिठाई के साथ नमकीन भी चाहिए। सुख के साथ दुःख भी चाहिए।

□आत्मा मे अनन्त सुख है। उसे बाहर खोजने की आवश्यकता नही। उसे भीतर ही प्राप्त कर सकते है। ज्ञानस्वभावी आत्मा को भूलकर मोह, राग, द्वेष आदि विकारी भावो का वहन करने से ही हम दुःखानुभव करते है।

दुःखी :

□जो असतुष्ट रहता है वह संसार का सबसे बड़ा दुःखी व्यक्ति है।

□मनुष्य वही तक दुःखी है, जहाँ तक वह अपने को ऐसा मानता है।

□ससार के दुखियो मे पहला दुःखी निर्धन, दूसरा जिसे किसी का ऋण चुकाना हो, तीसरा जो सदा रोगी रहता हो और सबसे दुःखी वह पुरुष है जिसकी पत्नी दुष्टा हो।

दु ख का मूल :

□राग और द्वेष कर्म के बीज है। कर्म मोह से उत्पन्न होता है और वह जन्म-मरण का मूल है। जन्म-मरण को ही दु.ख का मूल कहा गया है।

दुनिया विचित्र है :

□जो स्वय न सुन कर दुनिया को सुनाना चाहता है, दुनिया

उसमे सुनना नही चाहती। जो सुनना चाहते हुए भी सुनाना नही चाहता दुनिया उससे सुनने के लिए लालायित रहती है। दुनिया कितनी विचित्र है।

दुराग्रही :

☐दुराग्रही लोग अपने कुएँ का खारा पानी पीते हुए भी दूसरे कुए का मीठा पानी नही पीना चाहते।

दुर्जन ·

☐दुर्जन दूसरो के सुई के अग्रभाग जितने दोप भी देखता है, किन्तु अपने पर्वत जितने वडे दोपो को देखता हुआ भी अनदेखा कर देता है।

दुर्जन विजय :

☐छिद्रान्वेपी दुर्जन को मौन रखकर जीत सकते हो, वोलने मे हार जाओगे।

दुर्जन संगति :

☐दुर्जन की सगति करने से सज्जन का भी महत्व गिर जाता है, जैसे कि मूल्यवान माला मुर्दे पर डाल देने से निकम्मी हो जाती है।

दुर्जन-स्वभाव ·

☐दुर्जनो का स्वभाव चलनी के समान होता है जो दोपरूप चोकर आदि अपने पास रख लेती है और गुणरूपी आटे आदि

को अलग गिरा देती है।

दुर्जय

□क्रोध अत्यन्त दुर्जय शत्रु है। लोभ असाध्य रोग है। समस्त प्राणियो पर मैत्री भावना रखने वाला साधु पुरुष है। दयाहीन मानव पशु है, असाधु है।

दुर्लभ अंग :

□इस संसार मे प्राणियो के लिए चार परम अंग दुर्लभ हैं—मनुष्यत्व, श्रुति, श्रद्धा. और सयम मे पराक्रम।

दुर्बलता :

□दुर्बलता शारीरिक दृष्टि से हानिकारक है तो मानासिक दृष्टि से भी हानिकारक है। दुर्बल शरीर और नन में अनेक रोगो का एव पाप वासनाओ का निवास रहता है।

दुर्वचन :

□लोहमय काटे अल्पकाल तक दुःखदायी होते है और वे भी शरीर से सहजया निकाले जा सकते हैं, किन्तु दुर्वचनरूपी कांटे सहजतया नही निकाले जा सकने वाले, वैर की परस्परा को वढ़ाने वाले और महाभयानक होते है।

दुष्शल्य :

□पश्चाताप के बीज जवानी ने राग-रग द्वारा बोए जाते हैं; लेकिन उनकी फसल बुढ़ापे में दुःख-भोग द्वारा काटी जाती है।

दुष्ट :

□दुष्ट को मारना सहज है, किन्तु उसको सुधारना सहज नही।

दुष्ट शिष्य

□जैसे दुष्ट बैल चाबुक आदि के बार-बार प्रहार होने पर गाडी को वहन करता है, वैसे ही दुर्बुद्धि सेवक या शिष्य मालिक या आचार्य के बार-बार कहने पर कार्य करता है।

दुष्परिणाम :

□यदि तुमने गेंद को दिवाल पर मारा तो वह प्रत्यावर्तित होकर तुम्हारे पास ही आवेगा। यदि तुमने महापुरुष पर धूल फेंकने का प्रयत्न किया है तो वह धूल प्रत्यावर्तित होकर तुम्हारी ही आखो मे पडेगी।

देखना :

□सर्वसाधारण लोग आख से देखते है, मन (मनन-चिन्तन) से नही देखते।

देवता :

□जो समस्त मानव जाति को अपनेपन से ओत-प्रोत देखते है वे देवता हैं।

द्वेष :

□जो हम से द्वेष करता है, वह अपनी आत्मा से ही द्वेष करता है।

दृढ़निश्चयी :

☐जिसका निश्चय दृढ और अटल है वह दुनिया को अपने सांचे मे ढाल सकता है।

दृढ़प्रतिज्ञ :

☐अपनी प्रतिज्ञा को दृढ़ता से पालन करने वाले वीर पुरुष के लिए पृथ्वी आगन की वेदी के समान है, समुद्र एक नाली के समान है, पाताल-समतल भूमि के समान है और सुमेरु पर्वत बावी के समान है—अर्थात् उसके लिए कठिन से कठिन कार्य भी अति सरल हो जाते हैं।

दृढ़संकल्प :

☐"देह पातयामि वा कार्य साधयामि"

इस दृढ सकल्प के बल से ही मनुष्य सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुंच सकता है।

दृष्टि :

☐ भला बुरा एकान्त न कोई,
देखो जगमे आंख पसार।
अखिल सृष्टि गुण दोपमयी है,
किस पर करिये द्वेष और प्यार॥

दृष्टि-और-सृष्टि :

☐जब दृष्टि बदलती है तब सृष्टि भी बदलती है, किन्तु उससे

दृष्य-पदार्थों मे कोई परिवर्तन नही आता।

दृष्टिभेद :

☐एक ही वस्तु अधिकारी के भेद से अनेक प्रकार की दृष्टि-गोचर होती है, जैसे एक ही स्त्री पुत्र के लिए माता, पिता के लिए पुत्री और पति के लिए पत्नी हो जाती है।

☐नाना व्यक्ति एक ही वस्तु को नाना प्रकार से देखते है। इस दृष्टि-भेद से ही सघर्ष उत्पन्न होता है। दृष्टा की दृष्टि का समन्वय होने पर सघर्ष का नाम शेप रह जायेगा।

देखकर वैठो :

☐सभा, समाज, मे अपनी इज्जत पद और उम्र के अनुसार पहले ही से अपना स्थान देखकर वैठो।

देवाधिदेव :

☐जो विकारों का दास है, वह पशु है। जो उन्हे जीत रहा है, वह मनुप्य है। जो अधिकाश जीत चुका है, वह देव है और जो सदा के लिए जीत चुका है, वह देवाधिदेव है।

देवो न जानाति :

☐राजा का चित्त, कृपण का वित्त, दुर्जनो का मनोरथ, स्त्रियों का चरित्र और पुरुपो का भाग्य—इनको देवता भी नही जान सकते तो मनुष्य की क्या विसात !

देश का पतन :

□ जिस देश के व्यक्ति चारित्रहीन व्यक्तियो को प्रतिष्ठा देते हैं, उसे अपना नेता मानते है, उस देश का पतन अवश्यभावी है।

देश की पहचान :

□ किसी भी देश के अच्छे-बुरे उन्नत-अवनत होने की तुलना उसके वैभव एव भौतिक-शक्तियों से नही की जा सकती, किन्तु वहाँ के रहने वाले मनुष्य के चरित्र की ऊंचाई और जीवनपद्धति के आधार पर की जाती है।

देशभक्त :

□ फौलाद टूट जाता हैं, लोहा झुक जाता है पर देशभक्त न टूटने की चिन्ता करता है न झुकने के लिए प्रस्तुत होता है।

देह की सफलता :

□ देह की सफलता उसको हट्टाकट्टा बनाने मे नही, किन्तु दीन-दुखियो की सेवा मे लगा देने मे हैं।

द्वेषाग्नि :

□ द्वेषाग्नि यह एक ऐसी अनोखी अग्नि है जो अन्य को जितनी मात्रा मे जलाती है उससे कहीं अधिक द्वेषी को जलाती है।

दैवी सिद्धान्त :

□ परिश्रम हमारे जीवन का दैवी-सिद्धान्त है और आलस्य मृत्यु।

दो महान शक्तियाँ :

□संसार मे दो महान शक्तियाँ हैं—एक तलवार की तो दूसरी कलम की, किन्तु तलवार की शक्ति हमेशा कलम की शक्ति के सामने पराजित हुई है ।

दो विरोधी तत्त्व :

□हिंसा मृत्यु है, अहिंसा जीवन । हिंसा पशुबल है तो अहिंसा मनुष्यबल, हिंसा आसुरी-सम्पत्ति है तो अहिंसा-दैविक सम्पत्ति ।

दोष :

□सबसे बडा दोष किसी दोष का भान नही होना है ।

□दूसरे के दोष को बताकर स्वय निर्दोष बनने का प्रयत्न करना मूर्खता है ।

□कीचड और कूड़ा अपने पर डालकर अपने को स्वच्छ समझना बडी अज्ञानता है ।

□जब तक तुम्हारे मे दोष होगे तब तक अन्य मे भी दोष दिखाई देगे ।

दोष-सग्रह .

□दोष को छिपाने मे उसके सग्रह की इच्छा होती है ।

दोषान्वेषण :

□दूसरे के दोषो को देखने वाला व्यक्ति (देखकर प्रकट करने वाला) अपने मे रहे हुए उन-उन दोषो को ही प्रकट कर रहा है ।

दोषारोपण :

□जो धर्मात्मा गुणीजनो पर मिथ्या दोषारोपण करता है, वह स्वयं पतित होता है और दूसरे को भी पतित बनाता है।

दोषी :

□वस्त्र के सैकडो प्रावरणो के द्वारा भी प्रभात के स्वर्णिम आलोक को ढका नही जा सकता। दोषी सैकड़ो उपायो के बावजूद भी अपने दोषों को प्रकट होने से नही रोक सकता।

दोस्ती किससे ?

□पैसे उसी से उधार लो जो तुमसे अधिक श्रीमन्त हो। मित्रता उसी से करनी चाहिए जो गुणों से श्रीमन्त हो।

द्रव्य :

□द्रव्य का लक्षण सत् है, और वह सदा उत्पाद, व्यय एव ध्रुवत्व-भाव से युक्त होता है।

द्रष्टा :

□जो त्रुटियो की उपेक्षा करके अन्दर मे सौन्दर्य को देखता है, कमियों की उपेक्षा करके विशेषताओ पर ध्यान देता है, वही वास्तव मे द्रष्टा है, उसी के पास देखने की सच्ची कला है। वह जीवन की हर स्थिति मे प्रसन्न रह सकता है।

धन :

□धन अथाह समुद्र है जिसमे इज्जत अन्तःकरण और सत्य डूब

सकते हैं।

☐ धन से धन की भूख वढती है, तृप्ति नही होती।

☐ धन से ऐश्वर्य मिल सकता है, किन्तु सच्चा प्रेम नही। धन दौलत से मित्र मिल सकते हैं, किन्तु हितचिंतक नही। धन से भौतिक सुख मिल सकता है, आध्यात्मिक सुख नही।

☐ धन मूर्ख व्यक्ति का पर्दा है जो उसकी कमिया ससार की नजरो से छिपाये रखता है।

☐ धन खाद की तरह है, जव तक फैलाया न जाये, वहुत कम उपयोगी है।

☐ धन सुख को खरीद नही सकता, किन्तु आराम मे दु:खी वनाने मे सहायक वनता है।

धनवान :

☐ संसार मे वही वड़ा धनी है जिसका यश निर्मल है।

धनिक का रंज :

☐ उस धनिक का रज जिसे कोई नही लेता, उस भिखारी के दु ख से ज्यादा हैं जिसे कोई नही देता।

धन्य :

☐ धन्य हैं वो लोग जिनकी प्रसिद्धि उनकी सत्यता से अधिक प्रकाशमान नही होती।

धर्म :

□धर्म प्रजा का मूल है।

□यदि मनुष्य धर्म की उपस्थिति मे इतना दुष्ट है तो धर्म की अनुपस्थिति मे उसकी क्या दशा होती ?

□सम्पूर्ण विश्व मेरा देश है, सम्पूर्ण मानवता मेरा बन्धु है और भलाई करना ही मेरा धर्म है।

□"तिन्नान तारयाण"

धर्म तिरता है और तारता है।

□आत्मा मे रहे हुए सद्‌गुणो को प्रकट करने वाला एक मात्र धर्म ही है। धर्म मनुष्य से देवता बनाने मे सहायभूत होता है।

□'धर्म' भव समुद्र को पार करने वाली नौका है। उसपर बैठ-कर ही हम पार हो सकते है, उसे पकड़ रखने से नही।

□सूर्य के प्रकाश की तरह धर्म सब के लिए प्रकाशदायी है। सूर्य के प्रकाश पर किसी का स्वामित्त्व नही, किन्तु उपयोग हर कोई कर सकता है। यही बात धर्म के लिए भी है।

धर्म और कर्त्तव्य :

□धर्म जब तक कर्त्तव्य के साथ और कर्त्तव्य धर्म के साथ नही चलता, तब तक धर्म जीवन की कला नही बन सकता, और व कर्त्तव्य जीवन का आदर्श हो सकता है।

धर्म का रहस्य :

☐धर्म के सारभूत तत्त्वो को सुनो, सुनकर उसे हृदय मे धारण करो और जो व्यवहार अपने को प्रतिकूल लगे अनुकूल न लगे वैसा व्यवहार अन्य के प्रति मत करो—यही धर्म का सर्वोत्तम रहस्य है।

धर्म-जागरण .

☐जो साधक रात्रि के पहले और पिछले प्रहर मे अपने-आप अपना आलोचन करता है—मैंने क्या किया ? मेरे लिए क्या करना शेष है ? वह कौनसा कार्य है जिसे मैं कर सकता हूँ, पर प्रमादवश नही कर रहा हूँ ? यह चिन्तन मनुष्य के उत्कर्ष मे बड़ा सहायक होता है ।

धर्म का मूल :

☐धर्म का मूल सम्यक्श्रद्धा है ।

धर्म की खोज :

☐आज सारा ससार धर्म को ढूढने के लिए विश्व का कोना-कोना छान रहा है, तीर्थ, मन्दिर, शास्त्र-पुराण आदि मे धर्म खोजता है, किन्तु जहाँ अपने भीतर धर्म का अपार सागर भरा हुआ है उसे कभी खोजने का प्रयत्न नही किया इसी से धर्म प्राप्त करने मे वह असमर्थ रहा ।

धर्म की दुर्लभता :

☐सुन्दर स्त्री, आज्ञाकारी पुत्र तथा सम्पत्ति का पाना सहज है

किन्तु सद्धर्म की प्राप्ति सहज नही।

धर्म क्षेत्र :

☐अन्य क्षेत्र मे किया हुआ पाप, पुण्यक्षेत्र मे आने से नष्ट हो जाता है, किन्तु पुण्यक्षेत्र मे किया हुआ पाप वज्रमय बन जाता है।

धर्मप्रकाश :

☐शुभ चिन्तन, शुभ सकल्प व उत्तम चरित्र से विश्व के दुष्ट तत्त्वो का विनाश होता है और धर्म का प्रकाश फैलता है।

धर्मवृक्ष :

☐धर्मवृक्ष की गहरी छाया मे बैठने वाले मनुष्यो के दुख विमुख हो जाते है, सुख समीप आता है, हर्ष बढता है, विषाद नष्ट हो जाता है और सम्पदाएँ आकर उसके पद चूमती है।

धर्माचरण :

☐जब तक वृद्धावस्था नही आती रोगरूपी अग्नि देहरूपी झौपड़ी को नही जलाती, इन्द्रियो की शक्ति क्षीण नही होती है तब तक आत्महित के लिये धर्म का आचरण कर लो।

☐जीवन बीत रहा है, आयु अल्प है। वृद्धावस्था से बचने का कोई उपाय नही है। मृत्यु प्रतीक्षा मे खड़ी है। इन सब भयो को देखते हुए हमे इन सब भयो से मुक्ति दिलाने वाले धर्म का आचरण कर लेना चाहिए।

धर्म-द्वीप :

☐ जरा और मृत्यु के वेग से बहते हुए प्राणियो के लिए धर्म-द्वीप, प्रतिष्ठा, गति और उत्तम शरण है।

ध्येय :

☐ ध्येय जितना महान होता है, उसका रास्ता उतना ही लम्बा और बीहड होता है,

☐ महान ध्येय का मौन मे ही सर्जन होता है।

धर्मात्मा :

जिनका जीवन सद्गुणो से अलकृत है वही सच्चा धर्मात्मा है।

धर्माधर्म :

☐ न्याययुक्त कार्य धर्म है, अन्याययुक्त कार्य अधर्म।

धर्मानुष्ठान :

☐ जगत् विजेता सिकन्दर दुनिया से जब चला तो उसके दोनो हाथ खाली थे। उससे यह भी नही हो सका कि विजित-प्रदेश को देकर मौत को लौटा देता। ससार के सभी प्राणी खाली हाथ चले गये, किन्तु साथ मे कुछ भी नही ले गये। यह सोचकर हमे धर्म का अनुष्ठान करना चाहिए।

धीर :

☐ धीर पुरुष न्याय-मार्ग से कभी विचलित नही होते।

धुन :

☐धन से बडी चीज धुन है ।

धुआँ :

☐हम जानते है आग के पहले धुआ निकलता है । अच्छे कार्य के साथ बुरा भी एक पहलू है । मानव को चाहिए कि आग को तेज कर दे ताकि धुआ दृष्टि पथ मे न आये । बुराइयाँ असीम हो और अच्छाइयाँ असीम ।

ध्रुव :

☐गुण का नाश नही होता; किन्तु निमित्त पाकर उसमे परिवर्तन हो जाता है ।

ध्रुव संकल्प :

☐मनुष्य स्नेह से, द्वेष से अथवा भय से जिस किसी मे भी सम्पूर्णरूप से अपने चित्त को लगा देता है, अन्त में वह तद्रूप हो जाता है ।

धैर्य :

☐नीति मे निपुण पुरुष निन्दा करे या स्तुति करे, लक्ष्मी प्राप्त हो अथवा चली जाय । चाहे आज ही मरण हो जाये और चाहे युग के बाद हो, किन्तु धीर मनुष्य न्याय-मार्ग से विचलित नही होते ।

☐धैर्य कड़ुआ है, किन्तु उसका फल मीठा है ।

धोखा :

☐जो यह कल्पना करता है कि वह दुनिया के बिना अपना काम चला लेगा, अपने को धोखा देता है, लेकिन जो यह समझता है कि दुनिया का काम उनके बिना नही चल सकता और भी बडे धोखे मे है।

☐धोखा खाना अच्छा है, पर धोखा देना बुरा है।

ध्यान :

☐जिनकी कथनी करनी मे समानता है, वही ध्यान मे स्थिर रह सकेगा। जिसके आचार-विचार मे विषमता है वह ध्यान मे स्थिर नही हो सकता। सरल-मार्ग मे लडखडाकर चलने वाला विषम-मार्ग को कैसे लांघ सकता है ?

☐मानव ! जब तू प्रार्थना मे तल्लीन होता है तो अपने आपको भूल जा। अपने अस्तित्व को ईश्वर के चरणो मे लगा ले। ईश्वर को धन्यवाद दो कि उसने अपने को प्रार्थना के योग्य बनाया है। पवित्र मन से ईश्वर का ध्यान करना ही संन्यास है

☐अप्रमत्तभाव से ध्यान करने वाला साधक विपुल आत्मसुख को प्राप्त करता है।

ध्यान मत दो :

☐यदि तुम बुरे नही हो फिर भी तुम्हे कोई बुरा कहता है तो उसका दुःख नही मानना चाहिए। जो वस्तु जिसके पास है वही

तो वह देगा। श्वेतचन्द्र को काला कहने से वह कभी काला नही बन सकता।

□तुच्छ व्यक्तियो को मुह मत लगाओ और न उनके वाक्वाणों पर ही ध्यान दो वरना अपमान का भागी बनना पड़ेगा।

ध्वंस और निर्माण :

□ध्वस का काम सरल है, निर्माण का काम कठिन। कैंची जितनी तेजी से कपडा काटती है, सुई उतनी तेजी से उसे जोड़ नही सकती। निर्माण मे अनेक विघ्न है, ध्वंस मे कोई कठिनाई नही होती।

नकल :

□संन्यास की नकल की जा सकती है पर वैराग्य नही आ सकता। सैनिक की नकल की जा सकती है पर शौर्य नही लाया जा सकता। सूर्य का चित्र बनाया जा सकता है। पर उससे प्रकाश नही लाया जा सकता।

नकली मोती :

□आचारहीन विचार नकली मोती है, जिसकी चमक अप्राकृतिक और अस्थिर होती है।

नम्रता :

□अपनी नम्रता का घमण्ड करने से अधिक निन्दनीय और कुछ नही है।

☐तव हम महानता के निकटतम होते है जव हम नम्रता मे महान होते है।

☐उडने की वजाय जव हम झुकते है तव वुद्धि के अधिक निकट होते है।

☐नम्रता की मिठास, मिठाई से भी अधिक मीठी होती है।

☐नम्रता से काम वनता है और उग्रता मे काम विगडता है। घड़े कोमल मिट्टी से ही वनते है, कठोर मिट्टी से नही।

☐नम्रता व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रकट करती है।

☐वृक्ष फल आने पर नीचे झुक जाता है। वादल जल भरने पर नीचे आ जाते है। वैसे ही मेधावी ज्ञान पाकर विनम्र हो जाता है।

नरक :

☐सासरिक वैभव और सत्ता के पीछे पागल होकर जो दूसरो का वुरा चाहता है और उसका अहित करने का प्रयत्न करता है, उसका जीवन नरक वन जाता है।

☐खराव अन्तःकरण की यातना जीवित आत्मा का नरक है।

☐जहाँ क्रोध, द्वेप, वैर, घृणा और ईर्ष्या की वैतरनी वहती हो, वही नरक है।

नरक के स्थान :

☐अतिक्रोध, कठोर-वाणी, दरिद्रता और स्वजन-कलह ये

साक्षात् नरक के स्थान है।

नशा :

□नशे की हालत तात्कालिक आत्माहत्या है; जो सुख वह देती है केवल नकारात्मक है, दुःख की क्षणिक विस्मृति।

नाता :

□भाई बहन का नाता एक उदात्त, सरल और सुलभ नाता है। किसी को भाई या बहिन कहकर पुकारने मे समाज या परिस्थिति की कोई दिवार सामने नही आती। पर जहा जीवन-संगिनी बनने का प्रश्न उठता है वहां तो समाज और परिस्थिति के पग-पग पर संघर्ष है।

नादानी :

□मनुष्य तो कितना नादान और मूर्ख है, वह एक छोटा सा कीडा भी नही बना सकता, किन्तु दर्जनो देवताओ का सर्जन कर डालता है।

नाम :

□खोया हुआ सुयश कदाचित ही पुनः मिलता है—जब चरित्र का पतन होता है तब सब कुछ खो जाता है और जीवन का बहुमूल्य रत्न सदैव के लिए चला जाता है।

□गुण रहित नाम निरर्थक होता है।

□नाम मे क्या है ? जिने हम गुलाब कहते हैं, वह किसी और

नाम से भी वैसी ही सुगन्धि देगा।

नाम-स्मरण

☐नाम-स्मरण जन्म और मृत्यु को नष्ट कर देता है।

☐नीबू, इमली के स्मरण-मात्र से ही मुह मे पानी आ जाता है। उसी प्रकार भगवान का नाम स्मरण करने से हमारे सब पाप विलीन हो जाते हैं।

☐विकार से बचने का अमोघ उपाय प्रभु नाम है, पर नाम कठ से नही, हृदय से निकलना चाहिए।

न्यायालय :

☐ससार का इतिहास ससार का न्यायालय है।

न्याय :

☐ ससार मे झूठी तर्कों का आदर होता है और न्याय पैसो के मोल बिकता है।

नारी :

☐नारी की करुणा अन्तर्जगत का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए है।

☐नारी के जीवन का सन्तोष ही स्वर्णश्री का प्रतीक है।

☐पुरुष मे नारी के गुण आ जाते है तो वह महात्मा बन जाता है और नारी मे पुरुष के गुण आ जाते है तो वह कुलटा बन जाती है। सचमुच ही जब तक नारी मे ममता, समता, त्याग

और सेवा की धारा प्रवाहित है तब तक संसार मे मानवता भी जीवित है ।

□सूर्य का ग्रहण दिन में होता है और चन्द्रमा का ग्रहण रात्रि में, किन्तु नारी-पुरुष का सदा ग्रहण है ।

□पति के लिए चरित्र, सन्तान के लिए ममता, समाज के लिए शील, विश्व के लिए दया, जीवमात्र के लिए करुणा संजोने वाली प्रकृति का ही नाम नारी है ।

□कल की आदर्श नारी मोमबत्ती की तरह थी, जो खुद जलती थी पर दूसरो का प्रकाश देती थी ।

आज की स्त्री जुगनूँ की तरह है, जो इधर-उधर उड़ती हुई अपनी चमक दिखाकर समाज में सभ्रम पैदा करती रहती है ।

□शृंगार-प्रसाधन और सौदर्य-प्रदर्शन की इस भयकर बाढ मे बहती हुई नारी ने अपने को नही सम्भाला तो उसकी ज्ञान-विज्ञान और जनसेवा के क्षेत्र में होने वाली प्रगति अवरुद्ध हो जायेगी । आर्थिक बोझ से सुखमय संसार दु:खमय बन जायगा। संयम और सदाचार की जगह रोमांस और उच्छृखल आचरण ले लेगा ।

नारी का आभूषण :

□नारी का आभूषण शील और लज्जा है । बाह्य-आभूषण उसकी शोभा नही बढ़ा सकते ।

निकृष्टव्यक्ति :

☐ससार मे सबसे निकृष्ट व्यक्ति कौन है ? जो अपना कर्त्तव्य जानते है, लेकिन पालन नही करते ।

निखार कब ?

☐कमल कीचड मे खिलता है, हीरा पत्थरो मे मिलता है और मानव कठिनाइयों मे ही निखरता है। अत. हे मानव ! तू कठि-नाईयो से मत घबरा ।

निन्दा :

☐निन्दा से सामने वाले की बदनामी होगी या नही, इसका निर्णय तो भविष्य ही करेगा, किन्तु निन्दा करने वाले की जीभ अवश्य गन्दी होगी यह सुनिश्चित है ।

निन्दा और प्रशसा :

☐निन्दा या प्रशसा करना मानव का स्वभाव है। किन्तु निन्दा या प्रशसा किसकी करना, यह नही जानता। यदि निन्दा ही करनी हो तो अपनी करो और प्रशसा ही करनी हो तो दूसरो की। क्योकि अपनी निन्दा से आत्मा उज्जवल बनती है और पर-प्रशसा से आत्मउन्नत ।

निन्दा-समभाव :

☐मेरी निन्दा से यदि किसी को सन्तोष होता है, तो बिना प्रयत्न के ही मेरी उन पर कृपा हो गई, क्योकि श्रेय के इच्छुक

पुरुष तो दूसरों के सन्तोष के लिए अपने कष्टोपार्जित धन का भी परित्याग कर देता है। मुझे तो कुछ करना ही नही पडा।

निमित्त :

☐"निमित्ताऽभावे नैमित्तिकस्याऽभावः"

निमित्त का नाश होने पर नैमित्तिक का नाश स्वयमेव हो जाता है, कषाय के निमित्त का नाश होने पर कषाय स्वयमेव नष्ट हो जाता है

नियम :

☐अत्यन्त शिष्ट नियमों का पालन प्रायः कम ही होता है, जबकि अत्यन्त कठोर नियमों का उल्लंघन बहुत कम होता है।

निराश्रव :

☐जिस साधक का किसी भी द्रव्य के प्रति राग, द्वेष, और मोह नहीं है, जो सुख दु:ख मे समभाव रखता है, उसे न पुण्य का आश्रव होता है और न पाप का।

निराशा :

☐निराशावादी स्वभाव से ही मन्द, निष्ठुर और शंकालु होते हैं।

निर्दोष आजीविका :

☐जिस प्रकार भ्रमर द्रुम-पुष्पो से थोड़ा-थोड़ा रस पीता है, किसी पुष्प को म्लान नही करता और अपने को तृप्त करता है। उसी प्रकार व्यापारी ग्राहको से थोड़ा-थोड़ा लाभ लेता है,

किन्तु उनका शोपण नही करता।

निर्भय :

☐निर्भय वनने का महामत्र है—अवैरवृत्ति।

☐जो धीर, अजर-अमर, सदाकाल तरुण रहने वाले आत्मा को जानता है, वह कभी मृत्यु से नही डरता।

निर्माण :

☐कल किसने देखा है, आवेगा या नही? वर्तमान से भविप्य का निर्माण कर।

निर्लज्ज :

☐सवसे अधिक निर्लज्ज वही है जो ईश्वर को नही मानता।

निर्वाण :

☐सण्पूर्ण कर्मो का क्षय ही निर्वाण है।

निष्कारण प्रेम और वैर :

☐जिस प्रकार किसी से निष्कारण वैर हो जाता है उसी प्रकार निष्कारण प्रेम भी होता है। जितना निष्कारण वैर अधम कोटि का है उतना ही निष्कारण प्रेम उच्चकोटि का है।

निष्क्रियता :

☐संसारी आत्मा कर्मों से आवद्ध होने के कारण मन, वचन, व काययोग से युक्त है। योग मे क्रिया होती ही है। जव तक योगो का सम्वन्ध रहेगा तव तक कोई भी व्यक्ति भले ही तेरहवे

गुणस्थान मे क्यो न पहुँच गया हो, निष्क्रिय नही हो सकता।

निश्चय :

☐"देह पातयामि वा कार्यं साधयामि"
इस निश्चय के बल पर ही आत्मा परमात्मा बनने के लक्ष्य तक पहुच सकता है।

निःस्वार्थ :

☐नि.स्वार्थता ही धर्म की कसौटी है। जो जितना अधिक निःस्वार्थी है वह उतना ही अधिक आध्यात्मिक और शिव के समीप है।

निःस्वार्थ प्रेम :

☐निस्वार्थ प्रेम पराये को भी अपना बना देता है।

नीयत :

☐जिसकी नीयत अच्छी नही होती, उससे कभी कोई महत्कार्य सिद्ध नहीं होता।

नीति :

☐नीति-शास्त्र ही इस भूमंडल का अमृत है, यही उत्तम नेत्र है और यही श्रेय प्राप्ति का सर्वोच्च उपाय है।

☐नीति धर्म की दासी है। धर्म पालन के लिए मनुष्य को नीतिमान होना चाहिए और आजीवन नीतिपथ न छोड़ना चाहिए।

००

प

पंगु कम, अन्धे ज्यादा .

□जो जानते हुए भी गलत मार्ग पर चलते है, वे अन्धे हैं, देखते हुए भी मार्ग का अतिक्रमण नही कर सकते, वे पगु है। वैज्ञानिको का यह कथन सही है—पगु कम और अन्धे ज्यादा है।

पछतावा :

□सन्मार्ग पर चलने वाला कभी पछातवा नही करता। पछतावा करता है, विपम मार्ग पर चलने वाला राही।

पंडित .

□जिसके काम मे शीत-उष्ण, भय-प्रेम, धन, तथा दारिद्रय वाधक नही होते, वही पंडित कहलाता है।

☐जो पाप से डरता है वह पडित है।

पंडित और ज्ञानी :

☐पण्डित सर्वशास्त्रो का अध्येता होता है, ज्ञानी है, ज्ञानी उस शास्त्र के अनुसार चलता है।

पड़ोसी :

☐पड़ौसी से प्रेम करने वाला विपत्ति मे भी सुखी रहता है, जब की पडौसी से वैर ठानने वाला सम्पत्ति मे भी दुःखी होता है।

पति-पत्नी :

☐पति और पत्नी एक ही जुए मे जुते हुए दो घोडो के सदृश है। इन दोनों मे पूर्ण सौहार्द और प्रेम का होना आवश्यक है।

पति-पत्नी का नियम :

☐विवाह के समय पति पत्नी के मध्य एक समझौता होता है। पति यदि क्रोध में आजाये तो पत्नी को चाहिए कि वह मौन रखे आग मे घी का काम न करे। पत्नी यदि क्रोधित हो जाये तो पति प्रेम से उसे शान्ति का पाठ पढ़ावे, दोनो यदि इस समझौते का पालन करे तो उनके लिए ससार स्वर्ग बन जायेगा।

पत्नी :

☐सुयोग्य पत्नी परिवार की शोभा तथा गृह की लक्ष्मी है।

पदवी :

□सद्गुण कुलीनता की पहली पदवी है।

परकीय आशा :

□परकीय आशा सदा निराशा।

परछिद्रान्वेषण :

□यदि आप पर-छिद्रान्वेषी है तो समाज आपको मक्खी जैसा समझना होगा। दूसरो के दुर्गुणो को देखकर कहते फिरना, वैसा ही है जैसा गलियो का कूडा गाडियो मे भरकर ले चलना।

पर-निन्दा :

□पर-निन्दा का त्याग करो। दूसरो के दोपो की वात कहना ही निन्दा नही, वल्कि दूसरे को हीन वनाने की प्रवृत्ति भी निन्दा ही है जो आत्मघातक है।

परम-विजयी :

□जो पुरुप दुर्जेय सग्राम मे दस लाख योद्धाओ को जीतता है इसकी अपेक्षा एक वह जो अपने आपको जीतता है, यह उसकी परम-विजय है।

परमात्मा :

□न तो शास्त्र और न गुरु ही हमे परमेश्वर का दर्शन करा सकते है। मनुष्य स्वय ही मन, वचन और काया की शुद्धि से

आत्मा मे परमात्मा देखता है ।

पराजित :

☐महासग्राम मे विजित होकर भी जो मन पर विजय नही प्राप्त करता वह पराजित ही है ।

परिग्रही :

☐कुत्ता अगर अपने पट्टे को गहना समझे तो उस जैसा मूर्ख कौन होगा ? परिग्रही अपने परिग्रह को अगर सुख का साधन मान बैठे तो उसे हम क्या समझे और क्या कहे ?

परिचय :

☐किसी को अपना परिचय देना बुरा नही है, बुरा तभी है जब वह किसी स्वार्थ या अहंकार से दिया जाता है ।

परिस्थितियाँ :

☐यदि परिस्थितियाँ अनुकूल न रहे तो भगवान को दोष न दो । अपना ही निरीक्षण करो । यदि जरा गहराई से सोचोगे तो तुम्हें स्वय ही अपनी कठिनाइयो के कारण ज्ञात हो जायेगे ।

परिश्रम :

☐परिश्रम हमारा देवता है ।

☐परिश्रम उज्ज्वल भविष्य का पिता है ।

☐अपने अमूल्य समय का एक-एक क्षण परिश्रम मे व्यतीत करना चाहिए । इसी में आनन्द है । ऐसा करने से कोई क्षण भी

ऐसा नही वचता जव हमे सोच या पछतावा हो।

परिश्रमी :

☐परिश्रमी के घर के द्वार को भूख दूर मे ताकती है पर भीतर नही घुस सकती।

परीक्षा :

☐आग सोने की परीक्षा करती है और प्रलोभन सच्चे मनुष्य की।

परोपकार :

☐"परोपकाराय सता विभूतयः।"
सत्पुरुषो का जीवन परोपकार के लिए ही होता है।

☐परोपकार से उत्पन्न हुआ पुण्य सैंकडो यज्ञो की तुलना मे नही आ सकता।

पलायनवाद :

☐कर्म मे रहकर ही हम कर्म से महान हो सकते है। परित्याग करके या पलायन करके किसी प्रकार भी यह सम्भव नही है।

पवित्रता के प्रतीक :

☐प्रेम, पश्चाताप व सहानुभूति ये पवित्रता के प्रतीक है।

पशु :

☐अपनी कमजोरियो का ज्ञान होने पर मिटाने का जो प्रयत्न करता है वह मानव असाधारण, मिटाने का प्रयत्न करने पर भी

जो मिटा नही सकता, वह साधारण और जो अपनी कमजोरियो को जानता ही नही, वह पशु है ।

☐अतनी भूल को भूल मानकर सुधारने का जो प्रयत्न करता है, वह मानव, जो कदापि भूल नही करता, वह देवता और जो भूल को भूल नही मानता, वह पशु ।

पशु श्रेष्ठ है :

☐पशु खामोश रहता है और इन्सान बोलने वाला होता है। पर व्यर्थ बकवास करने वाले मनुष्य की अपेक्षा पशु श्रेष्ठ है ।

पश्चाताप :

☐पश्चाताप सुधार की पहली सीढी है, शान्ति, सुख और सन्तोप ही पश्चाताप का अन्तिम ध्येय है ।

पहचान :

☐यदि तुम्हे अपने आप को पहचानना आया तो तुम दुनिया को पहचान सकते हो ।

पाँच प्रश्न :

☐प्रातः उठकर प्रत्येक साधक अपने आप से पाच प्रश्न करे—

मैं कौन हूँ ?
कहां से आया ?
कहां जाऊंगा ?
क्या कर रहा हूँ ?

पाप का भागीदार :

☐जब तक मेरे पास जरूरत से ज्यादा खाने की चीजे है और दूसरो के पास कुछ नही है, जब तक मेरे पास दो वस्त्र है और किसी आदमी के पास एक भी नही है, तब तक दुनिया मे सतत चलते हुए पाप का मैं भागीदार हूँ।

पाप का मूल :

☐लोभ, द्वेप और मोह पाप के मूल है।

पाप की दुर्गन्ध :

☐पाप को दुर्गन्ध पुण्य के परिमल से अधिक तीव्रतर होती है। जितना भी प्रयत्न उसे छिपाने का करो वह प्रकट होकर ही रहेगी।

पाप के कारण :

☐मनुष्य राग, द्वेप, मोह और भय के वश होकर पाप-कर्म करता है।

पाप-शुद्धि :

☐जो पहले के अर्जित पाप को बाद मे मार्जित (साफ) कर देता है, वह बादलो से मुक्त शरद्पूर्णिमा के चन्द्रमा की भाति लोक को प्रकाशित करता है।

पाप श्रमण .

☐जो श्रमण खा पीकर खूब सोता है, समय पर धर्माराधन नही

करता, वह पाप श्रमण है ।

□जो श्रमण भिक्षा से प्राप्त सामग्री को अपने साथियो में बाटता नही है, तथा रसीले भोजन की प्राप्ति के लिए घर-घर भटकता है, वह पाप श्रमण है ।

पापाश्रव .

□प्रमाद बहुलचर्या, मन की कलुषता, विषयों के प्रति लोलुपता परपरिताप (परपीडा) और परनिदा—इन से पाप का आश्रव होता है ।

पात्र

□सरल हृदय एवं निष्कपट साधक ही शुद्ध हो सकता है । शुद्ध मनुष्य के अन्तःकरण मे धर्म ठहर सकना है । 'धम्मो सुद्धस्स चिट्ठइ'

पाप-कुपात्र :

□गुण योग्यपात्र मिल जाने से गुण ही रहते है किन्तु कुपात्र मे मिल जाने से वे ही गुण दोष बन जाते है, जैसे मीठे जलवाली नदियाँ समुद्र मे जाकर खारी बन जाती हैं ।

पिशुन :

□जो प्रीति से शून्य है वह 'पिशुन' है ।

पुण्याश्रव :

□जिसका राग प्रशस्त है, अन्तर मे अनुकम्पा की वृत्ति है और

मन मे कलुषभाव नही है, उस जीव को पुण्य का आश्रव होता है ।

पुनर्भव :

☐जैसे बीज जला डालने पर फिर वृक्ष पैदा नही होता, वैसे ही कर्म बीज को नष्ट कर देने पर पुनर्भव—जन्म और मरण रूपी फल उत्पन्न नही हो सकते ।

पुरुष .

☐जिसका हृदय पहले बोलता है और वाणी बाद मे वह महा-पुरुष ।

जिसकी वाणी पहले बोलती है और हृदय बाद मे बोलता है, वह मध्यम पुरुष ।

जिसकी केवल वाणी ही पहले और बाद मे बोलती है, वह-अधम पुरुष ।

पुरुष और नारी :

☐पुरुष को शक्तिमान और नारी को सुन्दर माना गया है । यही धारणा एक रूढी बन गई है, किन्तु यदि हम इसे वास्तविकता की कसौटी पर कसे तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि वास्तव मे पुरुष सुन्दर है और नारी शक्ति का आधार है ।

पुरुषार्थ :

☐निकम्मे शेर से मेहनती कुत्ता ही अच्छा है ।

☐मनुष्य वार-वार गिरता है, यह महत्त्व की वात नही, किन्तु गिरकर जो उठता है यही पुरुपार्थ है ।

☐भाग्य को कोसने की आदत को छोड़कर पुरुपार्थ को सहला ! सफलता का यह सर्वोत्तम मार्ग है । पुरुपार्थ भाग्य को फलित ही नही करता अपितु नये भाग्य का निर्माण भी करता है । प्रतिकूल भाग्य को अनुकूल वनाने का तो इसमे अद्‌भुत सामर्थ्य निहित है ।

☐विना कठिनाई का पुरुषार्थ सुगन्ध रहित फूल है व जलरहित वादल ।

☐हम सहजता से प्राप्त वस्तुओं को पाने के आदी हो गये है । यदि हमें विना पुरुपार्थ से वस्तु नही मिलती है तो खिन्न हो जाते हैं । किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए—सभी कार्य पुरुपार्थ से ही सिद्ध होते हैं । पुरुपार्थ से पगदण्डी भी राजमार्ग वन जाती है ।

☐किया हुआ पुरुषार्थ ही भाग्य का अनुसरण करता है, परन्तु पुरुषार्थ न करने पर भाग्य किसी को कुछ नही दे सकता ।

पुरुषार्थी :

☐मैं अपने जीवन पथ की वड़ी से वड़ी विघ्न-वाधाओं को परास्त कर दूँगा ।

☐पुरुषार्थी परिस्थितियों का गुलाम नही वनता किन्तु परिस्थितियां ही उसकी गुलाम वनती है ।

पुस्तक :

☐पुस्तके काल-सागर पर सुरम्य सेतु है। वे वर्तमान को अतीत से जोड़नी है और भविष्य की ओर उन्मुख करती है। पुम्तके निराशा मे आशा उत्पन्न करती है और गहन अन्धकार को आलोक मे वदल देती है

☐पुस्तको का मूल्य रत्नो से भी अधिक है, क्योकि रत्न बाहरी चमक दमक दिखाते हैं जवकि पुस्तके अन्तःकरण को उज्ज्वल करती है।

☐मनुष्य जाति ने जो कुछ किया सोचा और पाया है वह पुस्तको के जादू भरे पृष्ठो मे सुरक्षित हैं।

☐विचारो के युद्ध मे पुस्तके ही अस्त्र है।

☐बुद्धिमानो की रचनाये ही एकमात्र ऐसी अक्षय निधि है, जिन्हे हमारी मन्तति विनष्ट नही कर सकती।

☐आज के लिए और सदा के लिए सवसे वडा मित्र है अच्छी पुस्तके।

पूज्य :

गुणो से साधु होता है और अवगुणो से असाधु। इसलिए साधु को चाहिए कि वह अवगुणो को छोड गुणो को ग्रहण करे। आत्मा को आत्मा से जानकर जो राग और द्वेप मे सम रहता है, वह

पूज्य है ।

पूज्य कौन :

☐संस्तारक, शय्या, आसन, भक्त पान, तथा अन्य अनेक वस्तुओं का लाभ होने पर भी जिसकी इच्छा अल्प होती है, जो आवश्यकता से अधिक नही लेता, जो इस प्रकार जिस किसी भी वस्तु से अपने आप को सन्तुष्ट कर लेता है, जो सन्तोषी जीवन मे रत है, वह पूज्य है ।

पूर्ण शान्ति का मार्ग :

☐पूर्ण शान्ति का मुझे कोई मार्ग दिखाई नही देता, सिवाय इसके कि व्यक्ति अपने अन्तर की आवाज पर चले ।

पूर्ण शुद्ध :

☐बिना कांटो का गुलाब नही होता वैसे ही ससार मे विशुद्ध भलाई भी अलभ्य है जो पूर्ण शुद्ध है वही तो परमात्मा है ।

पैसा :

☐जब पैसे का सवाल आता है तब सब एक मजहब के हो जाते है ।

पौद्गलिक पदार्थ :

☐सुन्दर फल और मिठाइयो के आकार, रूप और रग मे तरह-तरह के मिट्टी और लकडी के खिलौने बाजार मे मिलते है पर क्या उनसे भूख मिट सकती है ? ससार के पौद्गलिक पदार्थों

को भी उसी तरह ही समझना चाहिए। उनसे मन की तृप्ति नही हो सकती।

पौरुष :

□वृक्षो के लगाने मे परम कुशलमति माली ने वाटिका मे कही, सहज भाव से, एक वकुल पौधा लगा दिया। कौन जानता था कि एक कोने मे पडा हुआ वही उपेक्षित वकुल का पेड अपने सुमनो की सुगन्ध मे ससार को परिपूरित कर देगा। साधारण स्थिति मे जन्म लेकर भी अनेक पुरुप अपने पौरुप से ऊपर उठ जाते है और दुनियाँ को अपने आदर्श चरित्र से आलोकित कर देते है। क्या अनजान व्यक्ति देश का सर्वोच्च नेता नही हुआ ?

प्रकट न करो :

□यदि हमने किसी के साथ भलाई की है, उपकार किया है तो उसे किसी के सामने प्रकट मत करो। क्योकि ऐसा करने से अह-भाव जागृत होता है। यह अहवृत्ति ही हमारी अच्छाईयो को नष्ट कर देगी।

प्रकाश :

□चार कारणो से ससार प्रकाश से प्रकाशित होता है—

अरिहन्त का जन्म होने से,

अरिहन्त देव की दीक्षा के अवसर पर,

अरिहन्त देव को जब केवल ज्ञान होता है और अरिहन्त

भगवान का निर्वाण होता है तब।

प्रकाश और विष :

☐पाप का विष भीतर होता है और ज्ञान का प्रकाश बाहर। बाहरी प्रकाश को तीव्रतम तेज करके पाप के विष को बाहर निकाल दीजिये और ज्ञान के प्रकाश को भीतर बुला लीजिये।

प्रकाश का रहस्य :

☐वह उल्लू जिसकी आँखें केवल रात के अन्धेरे में ही खुलती है, प्रकाश के रहस्य को कैसे जान सकता है।

प्रकृति :

☐प्रकृति को बुरा भला न कहो। उसने अपना कर्त्तव्य पूरा किया, तुम अपना करो।

प्रगति की मूलभूत बाधायें :

☐लक्ष्यहीनता, लक्ष्य की अस्थिरता और लक्ष्य की सकीर्णता— ये तीन प्रगति की मूलभूत बाधाये है।

प्रजातन्त्र की परिभाषा :

☐प्रजातत्र की सर्वोच्च परिभाषा यही है कि–जनता पर, जनता के लिए, जनता का राज्य।

प्रतिकार :

☐दलित-घृणित, पतित पक भी पैरो से रोदने पर विरोध करते है तो वाग्धनी स्वाभिमानी मानव अनुचित दवाव पर क्यों नही

विरोध करेंगे ?

प्रतिक्रमण :

☐प्रतिक्रमण सयम के छिद्रों को बन्द करने के लिए है। प्रतिक्रमण से आश्रव रुकता है, सयम मे सावधानी होती है, फलत. चारित्र शुद्ध होता है।

प्रतिक्रिया :

☐सचमुच आखे खोलकर देखोगे तो समस्त छवियो मे तुम्हे अपनी छवि दिखाई देगी और यदि कान खोलकर सुनोगे तो समस्त ध्वनियो मे तुम्हे अपनी ध्वनि सुनाई देगी।

प्रतिपक्षी बनो

☐यदि तुम्हे विजेता बनना है तो प्रेम को बल से, क्रोध को क्षमा से, अहकार को विनय से, अमगल को मगल से, स्वार्थ को निस्वार्थ से, मिथ्या को सत्य से जीतना चाहिए।

प्रतिशोध :

☐पर्वतो मे पानी नही रहता, महापुरुषो के मन मे प्रतिशोध की भावना नही रहती।

प्रतिष्ठा :

☐यदि आप स्वय प्रतिष्ठावान न होकर केवल पूर्वजो की प्रतिष्ठा के बल पर अपने को प्रतिष्ठित बनवाना चाहते हो तो यह आप का भ्रम है। अपने सेवा आदि गुणो से ही मानव प्रतिष्ठा

प्राप्त कर सकता है, जन्म, जाति व कुल से नही ।

☐महान व्यक्तियों ने जो प्रतिष्ठा प्राप्त की है वह उन्हे सहसा एक ही प्रयास में नही मिल गई है । जव उनके अन्य साथी लोग सोये पड़े थे तो वे चुपचाप आत्मोत्थान के लिए प्रयत्नशील थे । इस प्रकार वे उच्चता के शिखर पर पहुँचकर उच्च वन सके ।

प्रति-संहृत :

☐जहां कही भी मन, वचन, और काया को दुष्प्रवृत्त होता हुआ देखे तो धीर साधक वही उनको प्रति-संहृत करे—फिर सत्प्रवृत्ति में लगाये, जैसे जातिवान अश्व ढीली होती हुई लगाम को प्रति संहृत करता है—फिर ऊपर उठा लेता है ।

प्रतिस्रोतगामी वन :

☐अधिकांश लोग अनुस्रोत में प्रस्थान कर रहे हे—भोगमार्ग की ओर जा रहे हैं किन्तु जो मुक्त होना चाहता है, जिसे प्रतिस्रोत में गति करने का लक्ष्य प्राप्त है, उसे अपनी आत्मा को प्रतिस्रोत मे ही ले जाना चाहिए ।

प्रतिहिंसा :

☐प्रतिहिंसा की प्रेरणा के मूल में क्रोध है । वह पतन का मार्ग है । जो तुम्हें ऊँचा और महान वनाती है, वह है उपेक्षा ।

प्रतीक्षा :

☐जो एकदम सब कुछ कर डालने की प्रतीक्षा मे है, वह कभी

कुछ नही कर पायेगा ।

प्रथम सुख, पश्चात दु ख :

☐दाद के खुजलाने मे पहले जितना सुख होता है उतना ही खुजलाने के वाद असह्य दुःख होता है, इसीप्रकार ससार के सुख पहले वडे सुखदायक प्रतीत होते है लेकिन पीछे से उनसे असह्य और अकथनीय दु.ख मिलता है ।

प्रदर्शन :

☐जलशून्य मेघ अधिक प्रदर्शन करते है। हृदयशून्य व्यक्ति को प्रदर्शन का मूल्य अधिक रहता है । ऊनी और सूती वस्त्र अविरल मेघधारा मे भी पानी का प्रदर्शन अधिक नही करते है जवकि प्लास्टिक वस्त्र ओवरकोट किञ्चित् पानी का भी प्रदर्शन करते है ।

प्रभाव :

☐यदि आप अपना प्रभाव वनाये रखना चाहते है तो दो वाते याद रखिये—कभी किसी से झूठा वायदा मत कीजिये और कभी किसी को गलत सलाह मत दीजिये।

प्रभुता :

☐अपनी प्रभुता के लिए चाहे जितने उपाय किये जाये परन्तु शील के विना ससार मे सव फीका है ।

प्रभु प्राप्ति के मार्ग :

□शुद्धमन, प्रेममय व्यवहार, निष्काम भक्ति व निष्काम सेवा प्रभु प्राप्ति के मार्ग है ।

प्रभु भक्ति :

□यौवनावस्था मे मौज करना व बुढापे मे माला लेकर भगवान को भजना, आम खाकर गुठली का दान करना जैसा है, अत. युवावस्था मे ही प्रभु भक्ति करनी चाहिए ।

प्रभु सेवा ·

□जन सेवा ही सच्ची प्रभु सेवा है ।

प्रमाद :

□यदि ससार मे प्रमादरूपी राक्षस न होता तो कौन धनी और विद्वान न होता । आलस्य के कारण ही यह समुद्र पर्यन्त पृथ्वी निर्धन और मूर्ख लोगो से भरी हुई है ।

प्रयत्न :

□बुद्धि का विकास प्रयत्न से होता है । यहा तक की मानव सत्प्रयत्न से परमेश्वर को भी प्राप्त कर लेता है । यदि मानव प्रयत्न नही करता तो यह बुद्धि असहाय बन जाती और वैभव स्वप्न ।

प्रवृत्ति के बाद निवृत्ति :

□मनुष्य को केवल सासारिक प्रवृत्ति मे ही लगा नही रहना

चाहिए। प्रवृत्ति के वाद निवृत्ति आत्मकल्याण के लिए आवश्यक है।

प्रशंसा

□साधारण व्यक्तियो की प्रशसा प्राय झूठी होती है और ऐसी प्रशसा सज्जनो की अपेक्षा धूर्तों की ही अधिक की जाती है।

□दूरी ही प्रशसा की गहराई का मूल कारण है।

□साधक, न अपनी प्रशसा करे; न दूसरो की निन्दा करे।

□आत्मप्रशसक हीनकोटि का व्यक्ति होता है। मध्यमकोटि के मनुष्य की प्रशसा उसके मित्रगण भी करते है। उत्तम पुरुप की उसके शत्रु भी करते है।

प्रशंसा कुंवारी क्यों ?

□विचारी प्रशसा-स्तुति हजारो वर्प से अब तक कुवारी है। वह सज्जनो एव महापुरुपो से प्रार्थना करती है "मेरा वरण करो' लेकिन उसकी प्रार्थना ठुकराई जाती है। उसे वे स्वीकार नही करते। दूसरी ओर जो लोग उसको प्राप्त करने के लिए कोशिश करते हैं परन्तु वह उनसे दूर भागती जाती है, इसलिए प्रशसा वेचारी कुवारी है। दुर्जन को वह चाहती नही और सज्जनो को यह प्रिय नही लगती।

प्रश्न :

□धन पाकर किसे अभिमान न हुआ ? कौन विपयी पुरुप सकट

से दूर रहा ? इस ससार मे स्त्रियो ने किसका मन खण्डित नही किया ? राजा का प्यारा कौन हुआ ? किस माँगने वाले ने इज्जत पाई ? दुर्जन ने हाथ पड़कर किसने ससार का मार्ग सुख से पार किया ?

प्रसन्न रहो :

☐हमारी गुप्त बात प्रकट हो जाने पर दु:खी मत बनो । किन्तु फूल की तरह सदा प्रसन्न रहो । क्योकि इस ससार मे पद और प्रतिष्ठा, मान और मर्यादा सभी कुछ नाश होने वाले हैं ।

प्रसन्नता :

☐दूसरो की सफलता और अपनी हार दोनो पर प्रसन्न रहना सीखो ।

☐सम्पन्नता और प्रसन्नता एक ही वस्तुयें नही है, अपितु दो विभिन्न वस्तुये है । प्रसन्नता एक मन की अवस्था है, मूड है जो बाहरी दशा पर निर्भर है ।

☐अपने पर सबका अधिकार है किन्तु अपना अधिकार ईश्वर के सिवाय किसी पर नही है ।" यह विचार यदि मन मे स्थिर कर लिया जाये तो बस जीवन मे सदा ही बहार रहेगी, मन सदा प्रसन्न रहेगा ।

☐बीते हुए का शोक नही करते, आने वाले भविष्य के मनसूबे नही बांधते, जो मौजूद है उसी मे सतुष्ट रहते है, उन्ही साधको का

मुख प्रसन्न रहता है।

प्राण :

☐समस्त संसार के अन्धकार मे इतनी शक्ति नही है कि वह एक मोमबत्ती के प्रकाश को भी बुझा सके। जागे हुए प्राण को कोई शक्ति परास्त नही कर सकती।

प्रायश्चित्त .

☐पुन: अपराध नहीं करना ही अपराध का सच्चा प्रायश्चित्त है।

☐प्रायश्चित्त के तीन प्रकार हैं—आत्मग्लानि पुन: पाप न करने का दृढ निश्चय और आत्म शुद्धि।

प्रार्थना ·

☐स्वच्छ हृदय एव पवित्रता से रहित की जाने वाली प्रार्थना विना गुदे के छिलके के समान निरर्थक है।

☐प्रतिदिन सच्चे दिल से की गई प्रार्थना कभी निष्फल नही होती।

प्रिय-अप्रिय :

☐चाह के होने से ही प्रिय-अप्रिय होते है। चाह के न होने से प्रिय-अप्रिय नही होते

प्रेम :

☐सर्वोच्च प्रेम तकल्लुफ नही सहता।

☐प्रेम क्या है? खारा पानी, क्योकि उसका आदि मध्य और अन्त

आँसुओ से परिपूर्ण है ।

☐वह पत्थर है मनुष्य नही, जो प्रेम नही करता । वह कीचड की तरह गधा है जो प्रेम को अपवित्र करता है । प्रेम शरीर से प्रारम्भ नही होता वह हृदय से प्रारम्भ होता है । जिसके हृदय मे प्रेम है वह किसी से नही डरता ।

☐प्रेम से ही सृष्टि का जन्म होता है, प्रेम से ही उसकी व्यवस्था होती है और अन्त मे प्रेम मे ही वह विलीन हो जाती है ।

☐अपने प्रेम की परिधि हमे इतनी बढानी चाहिए कि उसमे गांव आ जाये, गाव से नगर, नगर से प्रान्त यो हमारे प्रेम का विस्तार सम्पूर्ण ससार तक होना चाहिए ।

☐प्रेम देना जानता है लेना नही । प्रेम मे अपार दौलत मिलती है पर प्रेमी लेना नही चाहता । वह तो निरन्तर देता ही रहता है ।

☐सनलाइट साबुन से कपड़े उज्ज्वल एवं साफ सुथरे हो जाते है तो प्रेम से अन्तर विरोध की धधकती ज्वाला शान्त होकर हृदय मे सरलता देवी का प्रवेश हो जाता है । तलवार की धार एक के दो करती है, किन्तु प्रेम की धार दो को एक करती है । प्रेम से मानव सरस एव उज्ज्वल बनता है ।

☐तिरस्कार या निन्दा से कोई व्यक्ति सन्मार्ग पर नही आसकता । सत्कार या प्रेम से ही व्यक्ति को सन्मार्ग पर लाया जा

सकता है।

☐ प्रेम हमे जोडना सिखाता है तोडना नही।

☐ मयूर की शोभा पखो से व पखो की शोभा मयूर से है, उसी प्रकार समाज की शोभा परस्पर प्रेम सम्वन्ध से है। प्रेमहीन मानव निर्जीव है।

☐ प्रेम निखरता है नम्रता मे,
प्रेम पनपता है समता भाव मे,
यो तो सव ही प्रेम के दाता है,
प्रेम महकता है ममता मे।

☐ मैंने दिल के दरवाजे पर लिखा 'अन्दर आना मना है'—हसता हुआ प्रेम आया और वोला—'मैं हर जगह प्रवेश कर सकता हू।'

☐ अपमान मे टूटे प्रेम को कौन जोड सकता है ? टूटा हुआ मोती लाख के लेप मे फिर नही जोडा जा सकता।

प्रेम के दो मार्ग।

☐ प्रेम से काम, काम से वासना और वासना से मानव पतन की ओर जाता है।

प्रेम से मैत्रीभाव, मैत्रीभाव से करुणा, करुणा से प्रमोद और प्रमोद मे आत्मा विकास की ओर वढता है।

प्रेरणा :

☐ दूसरो की वढती को देखकर जो उदास होता है वह मूर्ख है।

बुद्धिमान तो वही है जो दूसरों की वृद्धि को देख उनसे प्रेरणा ग्रहण करता है और अपना विकास करता है।

फकीर :

☐अलमस्त एवं सच्चे फकीर का आदर्श वाक्य है—अपने को ईश्वराधीन बना देना, सही अर्थों मे खुदा का बन्दा हो जाना। वह खुदा के अलावा न किसी को जानता है और न जानने की कोशिश ही करता है। खुदा से नाता रखनेवाले को दुनियाँ की भलाई बुराई से क्या मतलब ?

फूट :

☐उस जाति की स्थिति कितनी दयनीय है, जो परस्पर वैमनस्य के कारण कई सम्प्रदायो मे बँट चुकी है और हर सम्प्रदाय स्वयं को एक जाति मानने लगा है।

फूल और काँटा :

☐फूल के साथ काँटे की भी आवश्यकता है। क्योकि फूल खिलने और महकने के लिए है तो काँटे फूल के सरक्षण के लिए है।

बड़प्पन :

☐जो मानव अपने को छोटा समझता है दुनियाँ की नजरो में वह महान है। अपने को तुच्छ मानने मे उसकी सफलता उसके चरण चूमती है।

वड़ा व्यक्ति :

☐वहुत-सी और वडी-वडी गलतिया किये विना कोई व्यक्ति वडा और महान नही वना ।

वदनामी

☐एक वार की वदन।मी पचास वार की नेकनामी भी समाप्त कर देती है। दूध मे एक वार खरावी आने पर वह क्या पुनः पीने योग्य हो सकता है ?

वन्द रखो ?

☐स्वर्ण और मिह दोनो को वन्द रखना चाहिए। क्योकि एक मूल्यवान है तो दूसरा ताकतवर । एक का अपहरण होने का भय है तो दूसरे का हमलावर ।

वन्ध और मोक्ष :

☐परिणाम से ही वन्धन और परिणाम से ही मोक्ष होता है ।
"मनएव मनुष्याणा कारण वन्ध-मोक्षयो: ।"

वन्धन :

☐वन्धन तो कई तरह के होते हैं, सिन्तु प्रेम का वन्धन कुछ और ही होता है । भौरा लकडी को भी सासानी से काट सकता है, परन्तु वह कमल के कोश मे पडा हुआ शक्ति होने पर भी कुछ नही करता ।

☐वन्धन चाहे सोने का हो या लोहे का, वन्धन तो आखिर दुःख

कारक ही है। बहुत मूल्यवान डण्डे का प्रहार होने पर भी दर्द तो होता ही है।

बन्धन और मुक्ति :

☐किसी भी पदार्थ के प्रति समत्त्व भाव लाना ही बन्धन है और उसके ऊपर से ममत्व हटाना ही मुक्ति है।

बनो :

☐सत्यप्रिय बनो और धीरज से काम करो।

बर्बादी के कारण :

☐अतिनिद्रा, परस्त्रीगमन, कलह, अनर्थ करना, बुरे लोगों की मित्रता, कृपणता ये छह दोप मनुष्य को बर्बाद करने वाले है।

बलवान :

☐प्रलोभनों के बीच जो अनासक्त और दृढ़ रह सकता है वही बलवान है।

बस की बात :

☐जन्म और मरण इन दोनो पर भी हमारा कोई बस नही है, हां हम उनके अन्तराल का आनन्द अवश्य उठा सकते है।

बहुरूपिया :

☐हमारी यह जिन्दगी न जाने क्या-क्या खेल खेलती है, वह तो बहुरूपिया है। दूसरी दुनियाँ बनाते हमे समय नही लगता। यह जीवन तो पृथ्वी के गर्भ मे छिपे हुए पदार्थ की तरह है जिसमें

आप चाहें तो स्वर्ण भी निकाल सकते हो और कोयला भी।

बांटकर खाओ :

☐जो मनुष्य अपनी रोटी दूसरो के साथ बाटकर खाता है उसको भूख की भयानक बीमारी कभी स्पर्श नही करती।

बांटो :

☐भग जिस तरह ज्यादा के ज्यादा पीसने से ज्यादा नशीली हो जाती है वैसे ही आनन्द जितने ज्यादा आदमियो मे बाटोगे, बढता ही जायगा।

बालक .

☐बालक देश के दर्पण प्रकृति के अनमोल रत्न, सबसे निर्दोष वस्तु, मनोविज्ञान का मूल और शिक्षक की प्रयोगशाला है।

☐बालक राष्ट्र की आत्मा हैं; क्योकि यही वह बेल है जिसको लेकर राष्ट्र पल्लवित हो सकता है, यही वह भूमि है जिसमे अतीत सोया हुआ है, वर्तमान करवटे ले रहा है और भविष्य के अदृश्य बीज बोये जा रहे हैं।

☐बालक चमकते हुए तारे हैं जो ईश्वर के हाथ से छूटकर धरती पर गिर पडे है।

☐हर बालक इस सन्देश को लेकर आता है कि ईश्वर अभी मनुष्य से निराश नही हुआ है।

बाहरी चमक :

☐हमे बाहरी चमक दमक से किसी वस्तु को अच्छी नही मान लेनी चाहिए किन्तु वस्तु की विशुद्धता को देख कर ही उसे ग्रहण करना चाहिए क्योंकि जो चमकता है वह सभी सोना नही होता।

बिना बुलाये जाओ :

☐किसी के दुःख, बीमारी, आपत्ति मे या मृत्यु के समय बिना बुलाये ही चले जाओ। बुलाने की राह मत देखो। शत्रुता भूल कर भी आपत्ति के समय शत्रु की मदद करो।

बुद्धि :

☐अमूल्य साधन बहुमूल्य समय और कीमती जीवन यह सब किसके लिए ? कब तक ? ऐसा विचार मोह के आवरण वाली बुद्धि करने ही नही देती।

☐"विनाश काले विपरीत बुद्धि"।
विनाश के समय बुद्धि उलटी ही चलती है।

☐बुद्धि से विचार कर किये हुए कर्म ही श्रेष्ठ होते हैं।

☐बुद्धि से काम लेने वाला व्यक्ति आपत्तियो से पार हो जाता है; और मूर्खता से काम करने वाला सकट मे फँस जाता है।

बुद्धि का उपयोग :

☐मानव ने अपनी बुद्धि तो बहुत घुमाई किन्तु, घुमाते-घुमाते वह

ईतना घूम गया कि उसे अपने आपका भान भी नही रहा ।

बुद्धि का फल :

☐कदाग्रह न होना यही बुद्धि का फल है ।

बुद्धिमान :

☐यौवन और सौन्दर्य मे बुद्धिमत्ता अत्यन्त विरल होती है ।

☐एक मूर्ख भी एक मिनिट मे उतने प्रश्न कर सकता है जिनका उत्तर एक दर्जन बुद्धिमान एक घण्टे मे भी नही दे सकते ।

☐बुद्धिमान आदमी बोलते कम और काम अधिक करते है ।

☐जो अपनी आय से व्यय बहुत कम करता है, बुद्धिमान है ।

☐अपने प्रति बुद्धिमान बनने की अपेक्षा दूसरो के प्रति बुद्धिमान बनना सरल है ।

☐बुद्धिमान पुरुष गिरते हुए भी गेद के गिरने के समान एक वार गिरता है तो तत्काल पुनः उठ जाता है । मूर्ख तो मिट्टी के ढेले के समान गिरता है और चकनाचूर हो जाता है । फिर नही उठता ।

बुद्धिमान बनने का उपाय

☐जहाँ भी किसी मे विशिष्ट गुण को देखो, उसे ग्रहण करने की चेष्टा करो, और अपने मे दुर्गुण को देखो तो तुरत उसे छोड दो । गुण सग्रही मनुष्य श्रेष्ठ होता है ।

☐थोडा पढना, ज्यादा सोचना, कम बोलना, ज्यादा सुनना यही

बुद्धिमान बनने के उपाय है ।

बुद्धिमान् और बुद्धिहीन :

☐बोलने के पहले जो सौ बार सोचता है वह बुद्धिमान् । वोलने के बाद जो सौ बार सोचता है वह बुद्धिहीन ।

बुद्धि वृद्धि के उपाय :

☐जो सदा पूछता, सुनता, रात-दिन धारण करता है, उसकी बुद्धि सूर्य की किरणों से कमलिनी के समान वढ़ती है ।

बुराई :

☐बुराई का सम्पर्क हमारी अच्छी आदतो को भी दूषित कर देता है ।

बेकार :

☐यदि हम बेकार है, किसी कार्य को नही करते है तो हमे अपना समय प्रभु स्मरण मे व्यतीत करना चाहिए ।

ब्रह्मचर्य :

☐ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इन्द्रियो का सयम । जब तक पूर्ण इन्द्रिय संयम नही होगा तब तक वह सच्चा ब्रह्मचारी नही बन सकता । इच्छा का निरोध ही ब्रह्मचर्य है ।

☐ब्रह्मचर्य केवल कृत्रिम संयम नही है । बल्कि हृदय के भीतर से जागृत होने वाला आत्मनियंत्रण है ।

☐केवल जननेन्द्रिय पर निग्रह रखना ही ब्रह्मचर्य का अर्थ नही है, किन्तु सम्पूर्ण इन्द्रियो और विपयो पर निग्रह करना ब्रह्मचर्य का परिपूर्ण अर्थ है ।

☐ब्रह्मचर्यहीन जीवन विना लगर का जहाज है, जीवन सागर मे वहते रहने की योग्यता उसमे नही होती, किन्तु किसी किनारे पर रद्दी के साथ पड़ा रहना ही उसके भाग्य मे लिखा होता है ।

☐ब्रह्मचर्य जीवन का अग्नि तत्व है, तेजस् एव ओजस् है। उसका प्रकाश जीवन को ही नही, वल्कि सारे लोक को प्रकाशमान वना देता है ।

☐ब्रह्मचर्य केवल कृत्रिम सयम नही, वल्कि हृदय के भीतर से जागृत होने वाला आत्मनियन्त्रण है ।

ब्रह्मचर्य धर्म .

☐यह ब्रह्मचर्य धर्म, ध्रुव, नित्य, शाश्वत और अर्हत् के द्वारा उपदिष्ट है । इसका पालन कर अनेकजीव सिद्ध हुए हैं, हो रहे हैं और भविष्य मे भी होगे।

ब्रह्मचारी :

☐मनोज्ञ, राग उत्पन्न करने वाले शब्द, रूप, गन्ध, और स्पर्श का ब्रह्मचारी त्याग करे ।

☐आत्मगवेपी पुरुप के लिए विभूपा, स्त्री का ससर्ग और प्रणीतरस का भोजन तालपुट विप के समान है ।

ब्राह्मण :

☐जो मन, वचन, काया से दुष्कर्म नही करता वही सच्चा ब्राह्मण है ।

☐सिर मुडा लेने से, या गले मे रुद्राक्ष की माला धारण करने से, यज्ञोपवीत पहनने से, या ओकार के जप से कोई व्यक्ति ब्राह्मण नही हो सकता, किन्तु सत्य, शील, तप व धर्माचरण से ही व्यक्ति ब्राह्मण बनता है ।

☐जिसकी मेधाशक्ति अपूर्व है, जो अपने हित अहित के मार्ग को पहचानता है । जो समस्त प्राणियो का हित चाहता है । वही सच्चा ब्राह्मण है ।

भगवान का मन्दिर :

☐भगवान के पास जाने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नही अपने हृदय के भीतर ही टटोलो । इस हृदय को मलिन मत करो ! यह भगवान का मन्दिर है ।

भगवान की खोज :

☐भगवान के आवास नदी, पर्वत या मन्दिर नही हो सकते क्योकि इनमे पवित्रता कहा ? भगवान का निवास है ज्योतिर्मय चैतन्य-मन्दिर मे । जिस मन मे श्रद्धा की ज्योति प्रज्ज्वलित है उस प्रकाश मे ही भगवान रहते है ।

भक्त :

☐भक्त के हृदय मे प्रभु प्रेम की ज्वाला इतनी सतेज होती है कि उसमे काम वासना जैसी चीजे जलकर भस्म हो जाती है और आत्मा उज्ज्वल हो उठती है।

भक्ति :

☐भक्ति और सत्सग पापो के नाश और जीवन मे मिलने वाली शान्ति इन दोनो मे सहायक है।

☐भक्ति का अर्थ, दासता या गुलामी नही है। भक्ति का अर्थ है, अपने आराध्य के साथ एकता और अभेदता की अनुभूति। जब यह अनुभूति जगती है, तभी सच्ची भक्ति प्रकट होती है।

☐महापुरुषो की सच्ची भक्ति उनके उपदेश सुनकर उसका आचरण करने मे है।

भक्ति-पानी :

☐साबुन, अरीठा व पानी इन तीनो से वस्त्र स्वच्छ हो जाता है उसी प्रकार ज्ञान, ध्यान और कर्मयोग रूप साबुन से तथा भक्ति योग रूप जल से आत्मा स्वच्छ हो जाता है।

भक्तियोग :

☐भक्तियोग, ज्ञानयोग और कर्मयोग मे भक्तियोग सरल है। ज्ञान योग और कर्मयोग कठिन। ज्ञानयोग व कर्मयोग मे अहकार बढने की सभावना रहती है। अत भक्तियोग इन दोनो की अपेक्षा

श्रेष्ठ है। क्योकि भक्तियोग मे आसक्ति व अहकार नष्ट हो जाते है। ज्ञानयोग, कर्मयोग असिधारा पथ है तो भक्तियोग राजमार्ग।

भय :

☐इगलेण्ड की एक प्राचीन लोक-कथा है—एक यात्री को मार्ग मे प्लेग मिला। उसने पूछा—"प्लेग किधर जाते हो ?"
प्लेग— पाच हजार मनुष्यो को खाने के लिए जा रहा हूं।'
थोडे दिनो के बाद उसी यात्री को प्लेग वापस आता हुआ मिला।

यात्री ने कहा—"तुमने कहा था कि मैं पाच हजार को खाने जा रहा हू, किन्तु पचास हजार को कैसे खत्म किया ?"

प्लेग—'मैंने पांच हजार ही मारे है दूसरे सभी भयभीत होकर अपने आप मरे हैं।"

☐जब तक भय नही आता तब तक उससे डरना चाहिए, किन्तु आने के बाद उसका साहस पूर्वक सामना करना चाहिए।

☐भय मनुष्य को खतरे से दूर रख सकता है परन्तु खतरे मे केवल साहस ही उसकी सहायता करता है।

☐भय सदा अज्ञानता से उत्पन्न होता है।

☐जहाँ जड पदार्थो के प्रति आसक्ति और मोह है वहाँ भय-निश्चित है। इस भय से मुक्त होने का एकमात्र रास्ता विरक्ति है।

भय और अभय :

☐शस्त्र की सफलता भय मे है और शास्त्र की सफलता अभय में है ।

भयंकर झूठ :

☐भयकरतम झूठ वह नहीं, जिसे बोला जाता है वल्कि वह है जिस पर जिया जाता है ।

भलाई :

☐भलाई करने से ही मनुष्य को निश्चितरूप से आनन्द मिलता है ।

☐यदि तुम तन से या धन से किमी का भला नही कर सकते हो तो मत करो, किन्तु मन से भला करना मत भूलो ।

भलाई और बुराई·

☐भलाई अमरता की ओर जाती है, बुराई विनाश की ओर ।

भाग्य :

☐पुरुष के भाग्य को भगवान भी नही जान सकते तो मनुष्य की तो बात ही क्या है ?

☐हमे सन्तोप और आत्मतृप्ति तभी हो सकती है जबकि हम अपने भाग्य का निपटारा स्वय अपने तरीके से करे ।

भाव बढ़ाना .

☐आजकल के लोग दुनिया पर अपनी छाप विठाना चाहते है

किन्तु प्रभाव बढे ऐसे कार्य करने को उद्यत नही होते। प्रभाव भाव के बढने से बढ़ता है, प्रभाव भाव का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

भावना :

☐नाचकर, गाकर, कीर्तन मे रंग लाया जा सकता है, पर ईश्वर प्रेम नही लाया जा सकता। वह तो अन्तर की भावना से ही आ सकता है।

☐यदि हमारी भावना सही नही है तो हमारे निर्णय भी अवश्य गलत होगे।

☐आत्मबोध और जगद्बोध के बीच ज्ञानियो ने गहरी खाई खोदी, पर हृदय ने कभी उसकी परवाह नही की। भावना दोनो को एक ही मानकर चलती है।

भिखारी :

☐भिखारी को सारी दुनिया भी दे दी जाय फिर भी वह भिखारी ही रहेगा।

भीख :

☐भीख माँगना पुरुषार्थ का सबसे बड़ा लाछन है।

भीरु :

☐दोषी आदमी सदा भयभीत रहता है।

भूल :

☐जो कोशिश करता है उसमे भूले भी होती है।

☐अपनी भूल को नही समझना अज्ञान है।

भूल को स्वीकार नही करना दुराग्रह है।

भूल की पुनरावृत्ति करना मूर्खता है और भूल को सुधारने का प्रयत्न करना प्रगति है।

भूल जाना .

☐मनुष्य को देकर भूल जाना चाहिए लेकिन लेकर नही।

भोग :

☐भोगो के चिन्तन से ही मनुष्य भोगो का गुलाम वन जाता है तो भोगो का प्रत्यक्ष सेवन करने वाले की क्या दशा होगी ?

भोगी-अभोगी .

☐भोगो मे कर्मों का लेप होता है। अभोगी लिप्त नही होता। भोगी ससार मे भ्रमण करता है। अभोगी उससे मुक्त हो जाता है।

भोग-विरति

☐समदृष्टि पूर्वक विचरते हुए भी यदि कदाचित् यह मन सयम से वाहर निकल जाय तो यह विचार कर "कि वह मेरी नही है और न मैं ही उसका हूँ।" मुमुक्षु विपय राग को दूर करे।

भोजन :

☐जिस प्रकार दीपक अधकार की ,कालिमा का भक्षण करके

कज्जल रूप कालिमा ही पैदा करता है, उसी प्रकार मनुष्य भी जैसा खाता है वैसे ही अपने ज्ञान को प्रकट करता है।

☐शरीर का भोजन अन्न है और जीवन का भोज शास्त्रश्रवण। अन्न से शरीर पुष्ट होता है और शास्त्र श्रवण से जीवन।

☐सत्कार पूर्वक प्राप्त अन्न सदा वल प्रदान करता है। तिरस्कार की भावना से खाया हुआ अन्न मानव को निर्बल और द्वेषी बनाता है।

मत और बच्चा :

☐हर व्यक्ति अपने मत और बच्चो को अच्छा समझता है। लेकिन दूसरो का मत सौर वच्चा ठीक नही है यह मानना अनुचित है।

मत करो :

☐जिस काम को तुम स्वय नही चाहते, वह काम दूसरो के लिए मत करो।

मत झुको :

☐अपने प्राणो से भी हाथ धोना पड़े तो भी बुराई के आगे मत झुको।

मतभेद .

☐माता पिता के साथ मत-भेद हो सकता है किन्तु मन-भेद नहीं होना चाहिए।

शुकदेव व व्यास पिता पुत्र थे। इनमे मत-भेद था, मन-भेद नही।

मद :

☐संसार मे तीन मद है—विद्या का मद, धन का मद और कुल का मद। विद्यावान, कुलवान और धनवान बनने पर भी उत्तम पुरुष नम्र ही रहते हैं।

मदान्धता :

☐मदान्ध व्यक्ति उन्मत्त हाथी की भाँति क्या-क्या अनर्थ नही कर डालता।

मद्यपान :

☐मद्यपान से धन की हानि होती है, कलह बढता है, अपयश मिलता है। लज्जा का नाश होता है। और बुद्धि नष्ट हो जाती है।

मन :

☐मन नरक को स्वर्ग बना सकता है, स्वर्ग को नरक।

☐यदि तुमने दुर्जय मन को जीत लिया तो तुम दुनिया को सहज मे जीत सकते हो।

☐मन को शुद्ध करने के लिए सदा पवित्र मन्त्र का जप करना चाहिए। और मन को स्थिर करने के लिए निर्विकल्प ध्यान करना चाहिए।

☐जैसे परिश्रम से शरीर बलवान होता है वैसे ही कठिनाइयों से मन ।

☐यदि तुम कर्मों को नष्ट करना चाहते हो तो अपने मन को शुद्ध बनाओ । शुद्ध मन में ही प्रकाश उत्पन्न होता है ।

☐कायरो का मन मुर्दार, पापियो का मन रोगी, पेट भरों का मन जड, और सज्जनो का मन पवित्र होता है ।

☐जिसने अपने मन को वश में कर लिया उसने संसार भर को वश में कर लिया, किन्तु जो मनुष्य मन को न जीत कर स्वयं उसके वश मे हो जाता है उसने सारे संसार की अधीनता स्वीकर कर ली ।

☐कण्ठ छेदने वाला शत्रु वैसा अनर्थ नही करता, जैसा बिगड़ा हुआ मन करता है ।

☐जिस प्रकार बिना छप्पर वाले घर मे वर्षा का पानी सतत गिरता रहता है अवरुद्ध नही होता । उसी प्रकार अनावृत मन मे काम, क्रोध, तृष्णा रूपी शत्रु प्रवेश कर जाते हैं ।

मन और पैराशूट :

☐मानवमस्तिष्क ठीक एक पेराशूट की तरह है—जब तक खुला रहता है तभी तक कार्यशील रहता है ।

मन का दारिद्र्य :

☐वस्तु की दरिद्रता दूर हो सकती है, किन्तु मन की दरिद्रता

को दूर करने में स्वयं कुबेर भी समर्थ नहीं है।

मनन

☐आत्मा का अपने साथ बातचीत करना ही मनन है।

मन-मनोवेग :

☐मन के मनोवेग मे बुराई के कंकड मत भरो।

मनमोती :

☐दूध फटने मे घी चला जाता है। मन फटने पर स्नेहरूपी मोती समाप्त हो जाता है। मोती के टूटने पर क्या उसकी कीमत तद्वत रह सकती है?

मनः शुद्धि के उपाय :

☐मनः शुद्धि के तीन उपाय है—श्रम के प्रति प्रीति, सत्सग और भगवत् नाम स्मरण।

मनुष्य :

☐ईश्वर ने मनुष्य को नही बनाया किन्तु मनुष्य ने ईश्वर को बनाया।

☐ससार मे हर चीज आश्चर्य जनक है, किन्तु मनुष्य ससार का सबसे बडा आश्चर्य है।

☐मनुष्य तो दुर्बलताओ की प्रतिमा है जिसमे देवत्व और दानवत्व दोनो का ही समावेश है।

☐मनुष्य इस ससार मे आत्मा, विवेक और बुद्धि लेकर

आया है।

मनुष्य और घड़ी :

☐मनुष्य की दशा उस घडी के समान है जो ठीक तरह से रखी जाय तो सौ-वर्ष तक काम दे सकती है और लापरवाही से बरती जाय तो जल्दी बिगड़ती है।

मनुष्य और पशु :

☐प्रेम मनुष्य के भीतर एक शरीफ भावना का नाम है; जिसे निकाल दिया जाए तो मनुष्य और पशु में अन्तर नही रहता।

मनुष्य का ध्येय :

☐मानव के जीवन का लक्ष्य भोग नहीं, किन्तु त्याग है।

मनुष्य के सामने प्रश्न :

☐मनुष्य के सामने एक ही प्रश्न है अपने जीवन को "सत्यं शिव सुन्दरम्" कैसे बनाया जाय ! इस समस्या का एक मात्र हल है मानव मानवता को पहचाने। जिस दिन वह पहचान जायगा उसके जीवन का वह प्रथम मगल प्रभात होगा।

मनुष्य-जन्म :

☐मनुष्य का जन्म दुर्लभ है, उसका एक क्षण भी अमूल्य है। तो भी बडा आश्चर्य है कि मनुष्य कौड़ियो के समान उसका व्यय करते है।

मनुष्य जीवन :

☐जिस प्रकार मजबूत खम्भेवाला मकान भी पुराना होने पर गिर जाता है, उसी प्रकार मनुष्य जरा और मृत्यु के वश मे पड कर नष्ट हो जाते है ।

मनुष्य-जीवन का सार :

☐ज्ञान और चारित्र मनुष्य जीवन का सार है ।

मनुष्य भी पशु है ·

☐जिस मनुष्य मे विद्या, तप, दान, शील, गुण, धर्म नही है वह ससार मे मनुष्य होकर भी पशु है ।

मनुष्यता से खाली :

☐आप दोनो समय भरपेट खाते है और आपका पडौसी भूखा है तो आप धर्म और मनुष्यता से खाली है ।

मनुष्यत्व :

☐सेवा और भक्ति से मनुष्यत्व की दिव्य ज्योति प्रकट होती है ।

☐व्यापक प्रेम भाव यह मनुष्यत्व का सर्वांग सुन्दर फल है ।

मनुष्य महान है .

☐मनुष्य तुच्छ जीव नही है, उसके भीतर भगवान का तेज, सृष्टि का सत्त्व, सिद्धि का स्रोत रहता है । वह जैसा चाहे, वैसा अपने को बना सकता है ।

मनोवृत्तियां :

□मनोवृत्तियाँ सुगन्ध के समान हैं जो छिपाने से नहीं छिपतीं।

मन्दिर :

□मन्दिर वह पवित्र स्थान है जहां मानव त्रय-तापों से रहित होकर आत्म शान्ति का अनुभव करता है और जीवन विकास के सोपान पर अपने कदम रखता है।

□सत्य और विश्वास ससार के मन्दिर हैं।

मशीन और मनुष्य :

□'गलती न करने वाली मशीन' और 'गलती करने वाले मनुष्य इन दोनो में से किसी एक को पसन्द करना पड़े तो मनुष्य को ही पसन्द करना पड़ेगा। गलतफहमी से वहुधा सत्य का जन्म होता है, पर मशीनो से किसी भी दशा में मनुष्य नही निकल सकता।

मस्तिष्क :

□मस्तिष्क की शक्ति अभ्यास है, आराम नहीं।

□एक निर्बल मस्तिष्क अणुवीक्षण यन्त्र की भांति है जो छोटी-छोटी निरर्थक वस्तुओ को वड़ा भले ही कर दे, किन्तु वड़ी वस्तुओं को नही देख सकता।

महत्ता :

□केवल शक्ति सम्पन्न होना ही महत्त्वपूर्ण नही। शक्ति का जन-

हित मे प्रयोग करने से ही महत्ता प्राप्त होती है।

महत्त्वाकांक्षा :

□शान्ति ठीक वहाँ से शुरू होती है, जहा महत्त्वाकाक्षा का अन्त हो।

□अपने विश्वास का शिकार बनकर मर जाना प्रशसनीय है, अपनी महत्त्वाकाक्षा का धोखा खाकर मरना दुःखद है।

महाजन

□महापुरुषो द्वारा निर्दिष्ट पथ ही सर्वत्र शान्तिदायक है—"महाजनो येन गतः स पन्थः"

महादान :

□तीर्थकरो ने जो कुछ देने योग्य था वह दे दिया है, वह समग्र-दान यही है—ज्ञान, दर्शन और चारित्र का उपदेश।

महान :

□जो अपने मानसिक विचारो पर काबू कर सकता है वह विश्व मे महान है।

□जाननेवाला नही, किन्तु ज्ञान को पचानेवाला महान है।

□पूजा करवाने से पहले पत्थर को छैनी और हथोडी की कितनी मार सहनी पडती है, उसी प्रकार महान बनने से पूर्व मनुष्य को भी सघर्षों और यातनाओ का मुकाबला करना पडता है।

□याद रखो, जो महत् है, बडा है, वही दे सकता है, वही देता

है। इसे उलटकर यूँ भी कह सकते है कि जो दे सकता है, देता है, दाता है, वही महान है। जिनके पास होता है वही देता है। तुम्हारे पास जो है उसे देते चलो, बाटते चलो।

महान आत्मा

☐भयकर तूफान और घनघोर मेघ गर्जनाये जिस प्रकार सूर्य-चन्द्र को आतकित नही कर सकती उसी प्रकार महान आत्माओं को सुख-दु:ख हानि-लाभ विचलित नही कर सकते।

महान चिकित्सक :

☐प्रकृति, समय और धैर्य—ये तीन सर्वश्रेष्ठ और महान चिकित्सक है।

महानपुरुष :

☐दुनिया मे दुनियाँ की तरह रहना आसान है, एकान्त मे अपनी तरह रहना आसान है। लेकिन महान व्यक्ति वह है जो दुनिया मे रहकर भी एकान्त की मधुरता और स्वतन्त्रता को कायम रखे।

महान व्यक्ति :

☐महान व्यक्ति के तीन लक्षण है—उदारतापूर्वक योजना, मानवतापूर्वक अमल साधारण सफलता।

☐अधूरा कार्य छोडना निम्न स्तर के व्यक्ति का कार्य है। महान व्यक्ति वे है जो अपना कार्य अधूरा नही छोड़ते।

महापाप :

☐अपनी आवश्यकता की पूर्ति करना मनुष्य का कर्त्तव्य है लेकिन दूसरो का विनाश करके अपनी आवश्यकता के महल खडा करना महापाप है।

महापुरुष :

☐उच्च आत्माओ की समस्त क्रियाए आत्मलक्षी हुआ करती है अर्थात् उनकी वाह्य क्रियाओ मे एक आध्यात्मिक सकल्प ही प्रधान रूप मे परिलक्षित हुआ करता है।

☐महापुरुष अपने वडे-वडे गुणो को अल्प ही देखते है अत. वे अपने गुणो की प्रशसा नही करते। छोटा व्यक्ति अपने अल्प गुणो को भी वडा मानता है और उसकी वार-वार प्रशसा करता फिरता है।

☐महान पुरुषो के चित्त वज्र से भी अधिक कठोर तथा फूल से भी अधिक कोमल होते है।

माता :

☐वालक का भाग्य सदैव उसकी माता के द्वारा निर्मित होता है।

☐माता-माता ही है, जीवित वस्तुओ मे वह सबसे अधिक पवित्र है।

☐माता का हृदय वच्चे की पाठशाला है।

☐पूजा के योग्य सबसे प्रथम देवता माता है।
"मातृदेवो भव" माता की सेवा करो !

मातृवात्सल्य :

☐धायमाता को रखने पर भी पुत्र के प्रति वह ममता नही आ सकती जो माता की होती है। मातृवात्सल्य माता के पास ही है, आया मे नही।

मानव :

☐मनुष्य को भगवान नही, किन्तु सर्वप्रथम मानव बनने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। मनुष्य बनने के लिए व्यापार मे नीति-परायणता, हृदय मे दया-करुणा व जीवन मे सदाचार को स्थान देना चाहिए।

मानव और पशु .

☐मानव और पशु मे क्या अन्तर है ? मानव स्वय प्रेरित होकर कर्तव्य का पालन करता है जबकि पशु दूसरो से प्रेरित होकर काम करता है।

मानव जीवन :

☐मानव का दानव होना उसकी हार है। मानव का महामानव होना उसका चमत्कार है और मनुष्य का मानव होना उसकी जीत है।

☐मानव-जीवन का एक सस्मरण भी जीवन-चरित्र के विशाल

ग्रन्थ के समान हैं ।

मानवता के दीप .

□मानवता के दीप ही ससार को प्रकाशित करेंगे ।

मानवता कि त्रिवेणी :

□समन्वय, सहयोग एव सहानुभूति ही मानवता की त्रिवेणी है ।

मानव देह की अमूल्यता :

□एकवार पिंजरे से निकला हुआ पछी पुनः उस पिंजरे मे नही आता । उसी प्रकार मानव देह से निकला हुआ आत्मा का पुनः मानव देह मे आना दुर्लभ है ।

मानव देह में पशु :

□गन्ने को पशु भी खाता है और मनुष्य भी खाता है किन्तु अन्तर इतना ही है कि पशु छिलके भी निगल जाता है, जवकि मनुष्य सिर्फ रस पीता है । जो बुराई-भलाई का विवेक किए विना सव कुछ लेता जाए वह मानवदेह मे पशु है ।

मानवभव की सफलता :

□मानवभव की सफलता मौज-शोख मे नही, किन्तु त्याग व धर्म की सुन्दर आराधना मे है ।

मानस-मल :

□शोक, क्रोध, लोभ, काम, मोह, आलस्य, ईर्ष्या, मान, सन्देह, पक्षपात, गुणवान के प्रति दोपारोपण, निन्दा—ये वारह मानस-

मल है जिनके कारण बुद्धि भ्रष्ट होती है।

मानसिक सुख :

□सुख दो प्रकार के होते है—एक कायिक सुख और दूसरा मानसिक सुख। इन दो सुखो मे मानसिक सुख श्रेष्ठ है।

माया :

□माया जिस दिन से बनी उसी दिन से कह रही है, कि मेरे पास मा—मत, या—आओ।

□एक माया-कपट हजारों सत्यो का नाश कर डालती है। और सैकडो मित्रो को शत्रु बनाती है।

□पूजा का अर्थी, यश का कामी और मान-सन्मान की कामना करने वाला साधक बहुत पाप का अर्जन करता है और माया शल्य का आचरण करता है।

मायावी

□मुझे ऐसे आदमी से नफरत है जिसके बाहरी शब्द उसके भीतरी विचारों को छिपाते है।

□जो मनुष्य तप का चोर, वाणी का चोर, रूप का चोर, आचार का चोर और भाव का चोर होता है, वह किल्विषिक देव-योग्य कर्म करता है। किल्विषिक देव मर कर गूगा बनता है नरक तिर्यच मे जाता है जहाँ बोधि अत्यन्त दुर्लभ होती है।

मित्र :

□मित्र की तकलीफो के साथ तो सभी सहानुभूति दिखाते है पर मित्र की सफलता पर प्रसन्नता प्रकट करना तो विरले ही जानते है ।

□मित्र की आखो से ससार को देखो । जितना ही हम दूसरो के हृदय से अपना हृदय जोडेगे, उतने ही हम मित्रो की सख्या मे वृद्धि करेंगे ।

मित्रता :

□जो मित्रता वरावर की नही होती, उसका अन्त सदैव घृणा मे होता है ।

□शायद सवसे आन्ददायक मित्रताए वे है जिनमे वड़ा मेल है, वडा झगडा है और फिर भी वडा प्यार हैं ।

□ससार मे केवल मित्रता ही एक ऐसी चीज है, जिसकी उपयोगिता के सम्वन्ध मे दो मत नही हो सकते ।

□वहसवाजी न करने से, मित्र की सम्मति का सम्मान करने से, अपनी गलती स्वीकार करने से एव मित्र की पीठ पीछे निन्दा न करने से मित्रता अक्षुण्ण रहती है ।

□मित्रता सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है ।

□मुझे ऐसी मित्रता नही चाहिए, जो मेरे पावो मे उलझकर आगे चलने मे वाधक हो ।

मित्रता के योग्य :

☐आवश्यकता केवल इस बात की है हम ओरो के लिए उतने ही सच्चे हो, जितने हम अपने लिए है, ताकि मित्रता के योग्य हो सके।

मिथ्या वचन क्या है ?

☐मृपावाद, चुगली, निन्दा, क्रोध के आवेश मे बोले गये वचन, कटु वचन, बकवास ये सब मिथ्या वचन है।

मीठाबोल :

☐अपनी इच्छा से अप्रिय वचन मत कहो क्योंकि ईश्वर का निवास प्रत्येक प्राणी के अन्दर है। किसी के दिल को मत दुखाओ क्योंकि प्रत्येक आत्मा दुनिया का अनमोल रत्न है।

मुक्ति :

☐वासना का आसक्ति का, आत्यन्तिक क्षय ही मोक्ष है। और यही जीते-जी मुक्ति है।

☐जिनका अहकार तथा मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्ति को जीत लिया है, जो अध्यात्म भाव मे नित्य निरत है, जिन्होंने कामभोगो को पूर्णरूप से त्याग दिया है, जो सुख-दुःख आदि के सभी द्वन्द्वों से मुक्त है, वे अभ्रान्त ज्ञानीजन अवश्य ही अक्षय अविनाशी पद को प्राप्त होते है।

मुनि :

☐लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निंदा-प्रशसा, मान-अपमान मे सम रहने वाला मुनि होता है।

मुसीवतें :

☐जो दूसरो के लिए जियेगा उस पर बडी-बडी मुसीवते पडेगी पर वे सब उसे तुच्छ जान पडेगी। जो अपने लिए जियेगा उस पर छोटी-छोटी मुसीवते पडेगी फिर भी वे उसे बडी कठिन मालूम पडेगी।

मुस्कान

☐यदि हम जीवन पथ पर फूल नहीं बिखेर सकते तो कम से कम हम उस पर मुस्काने तो बिखर दें।

☐प्रीति की एक भाषा है, वह है अपने ओठो पर मुस्कान और हृदय मे प्रसन्नता।

मुस्कुराहट :

☐मुस्कुराहट आपके जीवन को आनन्द की लहरो से भर देती है। जीवन मे जो हँसता रहता है वह सौ वर्ष तक जीता है। रोता है वह अपनी आयु को घटाता है।

☐महापुरुषो का जीवन कष्टमय जीवन है। वे कष्टो का मुकावला हसते हुए करते हैं। क्योकि हसते रहने से कष्ट अपने आप विलीन हो जाते हैं।

मूर्ख :

□मूर्ख दो प्रकार के होते है—एक वह जो अपराध को अपने अपराध के रूप मे नही देखता है और दूसरा वह जो दूसरे के अपराध स्वीकार कर लेने पर भी क्षमा नही करता है।

□पर्वतो और वनो मे वनचरो के सग विचरना श्रेष्ठ है। परन्तु मूर्खों के सग स्वर्ग में भी रहना बुरा है।

मूर्ख और विज्ञ :

□मूर्ख व्यक्ति जीवन भर भी पण्डित के साथ रह कर भी धर्म को नही जान पाता जैसे कि कलछी दाल के रस को।

विज्ञ पुरुष एक मुहूर्त भर भी पण्डित की सेवा मे रहे तो वह शीघ्र ही धर्म के तत्त्व को जान लेता है जैसे कि जीभ दाल के स्वाद को।

मूर्खता :

□किसी भी कार्य के प्रारम्भ मे दुर्भाग्य की आशंका करने से अधिक मनहूस और मूर्खतापूर्ण वस्तु कोई नही। आने से पहले ही अमंगल की आस लगाना पागलपन ही है।

मूल तत्त्व :

□"एक सद्विप्रा बहुधावदन्ति"

एक सत्य को, एक ही तत्त्व को विद्वान लोग भिन्न-भिन्न प्रकार से कथन करते हैं।

मूल्य :

☐यदि तू अपना मूल्य आकना चाहता है तो अपना धन, जमीन पदवियो को अलग रख कर अपने अन्तरग की जाँच कर

मूल्य-मापन

☐मानव के माने हुए मूल्या से प्रकृति द्वारा प्रदत्त वस्तुओ का अवमूल्यन नही हो सकता, मोती, हीरे, पन्ने से क्या धान्य का मूल्य कम है ?

मृत्यु

☐अरे मानव ! तू मृत्यु मे क्यो डर रहा है ? डरने से क्या मृत्यु तुझे छोड देगा ? जो जन्मता है वह अवश्य मरता हे, क्या यह तू नही जानता ? मृत्यु के लिए राजा और रक समान है । यदि तू सचमुच ही मृत्यु से डरता है तो जन्म का कारण जो पाप प्रवृत्ति है उसे तिलाजलि देने के लिये प्रयत्नशील वन !

☐एक वार किसी साधक से पूछा—आप मृत्यु से नही डरते है तो मृत्यु से वचने की प्रार्थना क्यो करते हो ?

साधक ने जवाव दिया—मृत्यु एक गद्दीनसीन राजा है यदि वह शान्तिपूर्वक मेरे सामने अकेला आये तो मैं चुपचाप समर्पित हो जाऊं ! किन्तु वहअकेला कहाँ आता है ? उसके छोटे-मोटे वदमाश सिपाही ही विमारियो के रूप मे आकर मुझे पीडा दे रहे है अत उनके साथ सघर्प करना नही पड़े इसीलिए अमरता की प्रार्थना

कर रहा हू।

मै कौन हूँ ?

☐मै न तो शरीर हूँ, न रूपी हूँ और न मन हूँ, किन्तु शरीर और मन से परे निज बोध रूप अवर्णा, अरूपा चेतन तत्त्व हूँ।

मैत्री :

☐मैत्री एक मधुर जिम्मेदारी है।

मैत्री-भाव :

☐मित्रस्याह चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।
मैं, मनुष्य क्या, सब प्राणियो को मित्र की दृष्टि से देखू ! हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखे !

मैला डस्टर :

☐जो हर समय दूसरों के अवगुण को देखता है और हर घडी पराई निन्दा करता है वह एक प्रकार का ब्लेक बोर्ड को साफ करने वाला "मैलाडस्टर" है।

मोहावरण :

☐सम्पत्ति और विषय भोग मे लगा हुआ मन खपडी मे चिपटी हुई सुपारी की तरह है। जब तक सुपारी नही पकती तब तक अपने ही रस से वह खपडी मे चिपटी रहती है लेकिन जब रस सूख जाता है तब सुपारी खपडी से अलग हो जाती है, खडखडाने

उसकी आवाज सुनायी पडती है । उसी प्रकार सम्पत्ति और सुखोपभोग का रस जब सूख जाता है तब वह मनुष्य मुक्त हो जाता है ।

मोही-भावना .

☐शस्त्र या विष-भक्षण के द्वारा, अग्नि मे प्रविष्ट होकर या पानी मे कूद कर आत्महत्या करना, मर्यादा से अधिक वस्तुए रखना—मोही भावना है ।

मोक्ष :

☐वस्तुत: विवेक ही मोक्ष है ।

मोक्ष का अधिकारी :

☐जिसने विषय कषाय पर विजय प्राप्त करली है । लौकिक क्रियाओ पर नियत्रण कर लिया है । बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रह से जो रहित है और जिसका मन नियन्त्रित है और जो विदेहभाव मे रमण करता है, वह सच्चा मोक्ष का अधिकारी है ।

मोक्ष का मार्ग :

☐गुरु और वृद्धो की सेवा करना, अज्ञानी जनो का दूर से ही वर्जन करना, स्वाध्याय करना, एकान्तवास करना, सूत्र और अर्थ का चिन्तन करना तथा धैर्य रखना—यह मोक्ष का मार्ग है ।

००
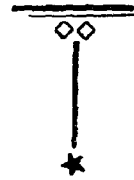
यथादृष्टि तथासृष्टि :

☐सृष्टि सुख-दु:ख देने के लिए नही रची गई। वह तो जैसी है वैसी ही रहेगी। हमारा मन जिस दृष्टिकोण से देखता है और जो उसके मतलब की चीज होती है उसका आरोप सृष्टि पर कर लेता है। सृष्टि पिपल के वृक्ष की तरह है, पक्षी उसके फल खाते हैं, आदमी उसकी शीतल छाया मे बैठता है और कोई उस पर रस्सी लटका कर आत्महत्या भी कर लेता है। इस तरह मनुष्य का मन स्वय ही सुख-दु:खो का सर्जन करता है और उसका आरोप सृष्टि पर लगाता है।

☐जो अपने शुद्धस्वरूप का अनुभव करता है वह शुद्धभाव को

प्राप्त करता है, और जो अशुद्धरूप का अनुभव करता है वह अशुद्ध भाव को प्राप्त होता है।

याद रखो

☐ भारत के निवासियो! तुम पश्चिम की रीति रिवाजो मे पड कर अपनी गरिमा को मत भूलो।

☐ नारी तेरा नारित्व पाश्चात्य मेडम की वेपाभूपा मे नही, वल्कि तेरे नारित्व का आदर्श सीता, दमयन्ती, सावित्री, चन्दन-वाला और मृगावती है।

☐ हे मानव! तेरा उपास्य फ्रायड, लेनिन या माओ नही, किन्तु त्यागमूर्ति भ० महावीर, वुद्ध, राम और कृष्ण है।

युद्ध :

☐ युद्ध मनुष्यता के लिए सवसे भयानक महामारी है, यह धर्म को मिटा देता है, राष्ट्रो का विनाश कर देता है और परिवारो का विध्वस कर देता है।

रहस्य :

☐ जो व्यक्ति अपने रहस्य को छिपाए रखता है वह अपनी कुश-लता अपने हाथ मे रखता है।

☐ जो व्यक्ति अपना रहस्य अपने सेवक को वताता है वह सेवक को अपना स्वामी वना लेता है।

रागासक्ति :

□पश्चाताप के बीज युवावस्था मे रागरंग द्वारा बोए जाते है; किन्तु उनका फल वृद्धावस्था मे दु.ख-भोग द्वारा प्राप्त किये जाते है।

राम कौन ?

□"रमन्ते योगिनो इति राम·"

जिसमे योगीजन रमण करते है, वह राम है। जो आत्मा में रमण करता है वह राम है।

रुचि :

□हमारी रुचि हमारे जीवन की कसौटी है और हमारे मनुष्यत्व की पहचान है।

रोगोत्पत्ति के कारण :

□अधिक खाने से, विना भूख के खाने से, अधिक सोने से, अधिक विपय के सेवन से, मिर्च मसाले के अधिक खाने से एव मलमूत्र के रोकने से रोग पैदा होने है।

रोष का अन्त :

□रोष और जोश का अन्त अफसोस पर होता है।

लक्ष्मी :

□ उत्साह सपन्नमदीर्घ सूत्रं,
क्रियाविधिज्ञ व्यसनेष्वसक्तम्।

शूर कृतज्ञ दृढसौहृद च,
लक्ष्मीः स्वय याति निवास हेतो ॥

जो उत्साही है, दीर्घसूत्री (आलसी) नही है, कार्य करने की विधि को जानता है, किसी प्रकार के व्यसन मे आसक्त नही है, बहादुर है, किये हुए उपकार को मानता है और जिसकी मैत्री दृढ होती है, ऐसे सज्जन के पास रहने के लिए लक्ष्मी स्वय ही उपस्थित हो जाती है।

लक्ष्य

☐समस्त कर्म का लक्ष्य आनन्द की ओर है, एव आनन्द का लक्ष्य कर्म की ओर है।

लक्ष्मी की सफलता :

☐लक्ष्मी की सफलता उसके सग्रह मे नही, किन्तु उसके सदुपयोग मे है।

लक्ष्यसिद्धि :

☐जिस प्रकार धनुर्धर बाण के बिना लक्ष्यवेध नही कर सकता उसी प्रकार साधक भी बिना ज्ञान के मोक्ष के लक्ष्य को नही प्राप्त कर सकता।

लघुता

☐दूसरे को छोटा समझना बहुत ही आसान है, किन्तु अपने आपको छोटा समझना अत्यधिक कठिन है।

लज्जा :

☐अपने हाथ से ऐसे अकृतकार्य नही करना चाहिए जिससे लोगो के सामने जाने मे लज्जा का अनुभव हो।

वचन :

☐जीभ तलवार है, इसके घाव भयकर होते है। लोहे के विष-वुझे तीरो की पीड़ा कुछ क्षण वाद शान्त हो सकती है, किन्तु वाणी के बाणो की पीड़ा कभी शान्त नही होती।

☐"वाया दुरुत्ताणि....महब्भयाणि" वाणी से बोले हुए दुष्टवचन महाभय के कारण होते है।

☐बाईवल मे कहा है—जबान के वार से जितने आदमी मरते है उतने तलवार के वार से नही।

☐जिस वचन पर अमल नही हो सकता वह वचन बेकार है।

वचनगुप्त :

☐जो वाणी की कला मे कुशल नही है और वचन की मर्यादाओ को नही जानता, वह मौन रहता हुआ भी वचन गुप्त नही है।

☐जो वाणी की कला मे कुशल है, वचन की मर्यादा का जानकार है वह वाचाल होते हुए भी 'वचनगुप्त' है।

वफादार :

☐वह व्यक्ति वफादार नही हो सकता जो तुम्हारी हरबात की

प्रशंसा करता हो, वफादार तो वह है जो प्रसंग आने पर तुम्हारी कटु आलोचना भी करता हो। और तुम्हें गलत कामों से बचाता हो।

वर्तमान :

□न अतीत के पीछे दौड़ो और न भविष्य की चिन्ता में पड़ो। क्योंकि जो अतीत है वह तो नष्ट हो गया और भविष्य अभी आ नहीं पाया। अतः वर्तमान को भी उज्ज्वल बनाओ।

वशीकरण मंत्र :

□मित्र को सरलता से, शत्रु को युक्ति से, लोभी को धन से, स्वामी को कार्य से, विद्वान को आदर से, युवती को प्रेम से, बन्धुओं को समानता के व्यवहार से, महाक्रोधी को क्षमा से, गुरु को अभिवादन से, मूर्ख को कहानियां सुना कर, विद्वान को विद्या से, रसिक को सरसता से और सबको शील से वश में करना चाहिए।

वाचन-मनन :

□ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से वाचन मनन करना यह कर्तव्य निष्ठा का सहज और प्रामाणिक पुरुषार्थ है।

वाणी :

□सज्जन पुरुषों के कण्ठ में सुधा रहती है। अर्थात् उनकी वाणी में मधुरता होती है।

□वाणी से वढकर चरित्र की निश्चित परिचायिका और कोई चीज नही।

विग्रह के कारण :

□धन, सत्ता, स्त्री और मताग्रह ये विग्रह के चार कारण है।

विचार :

□विचार वीज है और आचार उसके कार्य ! यदि वीज पवित्र हैं तो उसके कार्य फल फूल निश्चित पवित्र होगे। यदि विचार पवित्र है तो आचार निश्चित रूप से पवित्र होगा।

□मनुष्य वस्तुओ के ममत्व को छोड सकता है किन्तु कदाग्रह को नही। मनुष्य को चाहिए कि कदाग्रह का त्याग कर जीवनोपयोगी नये विचारो को अपनाए।

विचारक्रान्ति :

□जिस प्रकार वर्षा का पानी पहाडो पर वून्द-वून्द करके गिरता है, वहॉ से प्रवाहित होता हुआ घाटियों से सकरे मार्ग से निकल कर एक नाले का रूप धारण करता है और नाला नदी मे मिल कर एक विशाल रूप धारण कर लेता है। उसी प्रकार विचार धारा भी एक श्रेष्ठ मानव के मस्तिष्क से अवतरित हुई, फिर वह एक से दूसरे मे होती हुई जन सामान्य मे पहूच जाती है जहॉ वह क्रान्ति तथा संघर्ष का रूप धारण कर लेती है।

विचारणीय :

☐कैसा समय है ? कौन-कौन मित्र है ? कैसा देश है ? क्या आमदनी है ? क्या व्यय है ? मेरा क्या स्वरूप है ? और मेरी शक्ति कितनी है ? मनुष्य को समय-समय पर इन बातो का विचार करना चाहिए ?

विचारवल

☐वाहुवल की अपेक्षा विचारवल अधिक प्रभावशाली होता है ।

विचारो की विमारी

☐विचार करना आवश्यक है, किन्तु अधिक और निरर्थक विचार करना वीमारी है ।

विकार .

☐जैसे वात, पित्त और कफ के सम्मिलन से सन्निपात हो जाता है और मनुष्य उससे अपना भान भूल जाता है, वैसे ही काम, क्रोध ओर लोभ जव आ मिलते है तो प्राणियो की दुर्गति कर डालते है ।

विजय ·

☐इस जीवन मे विजय केवल तभी हो सकती है जव मानव-शरीर सुख को, भोग की वासनाओ को भूल कर मोह उत्पन्न करने वाली वस्तुओ से ध्यान हटाकर केवल अपने लक्ष्य की ओर ध्यान दे ।

□लोभी को धन से, क्रोधी को मधुरता से, मूर्ख को सद्व्यवहार से एवं विद्वान को विश्वास से जीतना चाहिए।

विजयी :

□विजयी वही है, जो हारकर भी हसता रहता है।

विडम्बना :

□कैसी विडम्बना है ! मनुष्य पुण्य का फल तो चाहता है,किन्तु पुण्य करना नही चाहता और पाप करता है, किन्तु उस पाप का फल नही चाहता।

विद्या :

□विद्या धर्म की रक्षा के लिए है न कि धन जमा करने के लिए।

विनय और उसका फल :

□धर्म का मूल विनय है और उसका अन्तिम फल है मोक्ष। विनय के द्वारा साधक कीर्ति, श्लाघनीय श्रुत और समस्त इष्ट तत्त्वो को प्राप्त करता है।

विनाश :

□नाश की पहली अवस्था बुद्धि विपर्यय है। बुझने वाला दीपक बुझने से कुछ पहले एकबार चमकता है।

विपत्ति :

□विपत्ति सत्य का पहला रास्ता है।

विपत्तिस्थान :

☐अविवेक ही समस्त विपत्तियो का स्थान है।

विरोध :

☐विरोध प्रचार की चावी है।

विरोधी :

☐विरोधी को जवाव देते समय विचारो को तरतीव दो, शब्दो को नही।

विरोधी पर विजय :

☐अपकारी को शस्त्र से नही मारकर उपकार से मारना चाहिए। सज्जन इसी नीति से अपने विरोधी पर विजय प्राप्त करते है।

विवेक :

☐जीवन की सभी छोटी वडी क्रियाओ मे विवेकी की आवश्यकता है। विवेकी व्यक्ति अन्धकार मे भी प्रकाश खोज लेता है।

विवेक शून्य शास्त्रवाचन :

☐यदि आप आख वन्द करले और उस पर दस हजार मील दूर तक देखने वाली दूरवीन लगा दे तो क्या दिखाई देगा ? यही वात विवेक की आख और शास्त्र की दूरवीन के सम्वन्ध मे है। विवेक-ज्ञान के विना शास्त्र क्या कर सकता है ?

विश्वास

☐विश्वास न तो मागा जाता है और न खरीदा जाता है, वह तो अपने आप ही उपजता है। जिस प्रकार प्रेम। विश्वास का कोई आधार होना चाहिए, नही तो वह अन्धविश्वास होता है।

☐किसी के छिपे अवगुण प्रकट न करो, क्योकि उसकी वदनामी करने से तुम्हारा विश्वास घट जायगा।

☐जिसका प्रभु की कृपा पर अनन्त विश्वास है उसके लिए कृपा की नदी सदा वहती रहती है।

☐विश्वास के बल पर ही विदेश मे गए हुए पति के लौटने की पत्नी प्रतीक्षा करती रहती है। विश्वास शक्तिसम्पन्न है।

☐विश्वास के वल पर ही मानव अपने लक्ष्य तक पहुचता है।

☐विश्वास अपने आप मे अमर औषधि है। अपने आप मे ऊंचे आदर्शो मे जो श्रद्धाशील नही, वह कभी भी विश्वास पात्र नही बन सकता।

☐अपने ऊपर असीम विश्वास स्थापित करना और अकेले बैठ कर अन्तरात्मा को ध्वनि सुनना वीर पुरुपो का काम है।

☐शत्रु का प्रेम, स्वार्थी की प्रशसा, ज्योतिषी की भविष्यवाणी, और धूर्त के सदाचार पर हमे विश्वास नही करना चाहिए।

वृत्तियां :

☐जब हमारी वृत्तियो आत्मा की ओर जाती है तो हम उपर

उठते है और जब शरीर की ओर मुड़ती है तो हम नीचे गिरते है।

वेग-आवेग और संवेग

☐मन गतिशील है। वेगवान है। वेग जब अपनी मर्यादा को लाघता हे तब वह आवेग बन जाता है। मन का आवेग ही अशान्ति है। आवेग को रोकना ही सवेग है। सवेग मे ही आत्म-शान्ति का अनुभव होता है।

वेदना :

☐यदि आत्मा से परमात्मा बनना है तो कष्ट को सहना ही पडेगा। यदि नाक मे मोती पहनना है तो नाक छेदन का कष्ट सहना ही पडेगा। माता बनने के लिए प्रसव की वेदना सहनी ही पडेगी।

व्यस्तता :

☐व्यस्त मनुष्य को आसू बहाने के लिए अवकाश नही।

व्यर्थ

☐अप्रतिभाशाली की विद्या, कजूस का धन, और डरपोक का बाहुबल पृथ्वी पर ये तीनो व्यर्थ है।

व्यवहार :

☐मधुर व्यवहार मनुष्य को जनप्रिय बनाता है।

☐व्यवहार वह दर्पण है, जिसमे प्रत्येक व्यक्ति का अपना प्रति-

बिम्ब दिखता है।

व्यवहार और अध्यात्म :

☐ अध्यात्म और व्यवहार जीवन के अन्योन्याश्रित पक्ष है। व्यवहार-शून्य अध्यात्म गतिशील नही होता तो अध्यात्म-शून्य व्यवहार प्राणवान नही होता। दोनो का सामजस्य ही रसमय होता है।

व्यष्टि में समष्टि :

☐ जिस प्रकार नदी महानदी मे, महानदी समुद्र मे विलीन होकर अपना अस्तित्व समाप्त कर देती है। उसी प्रकार जो व्यक्ति सघ समाज मे सम्मिलित हो जाता है उसका अपना अस्तित्व समाप्त हो जाता है। ☐

श
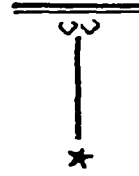
शक्ति :

☐सवलता ही सजीवता है और दुर्वलता निर्जीवता ।

☐जिसके पास अपनी शक्ति नही उसे भगवान भी शक्ति नही देता ।

शत्रु और मित्र ·

☐इस ससार मे कोई भी किसी का मित्र नही है और न कोई किसी का शत्रु । अपना सद्-असद् व्यवहार ही मित्रता और शत्रुता का कारण वनता है ।

शब्द का प्रयोग :

☐यदि वोलना उचित है और आवश्यक है तो ऐसा वोलो जिससे

स्व पर का हित हो । शब्द का निरर्थक अपव्यय मत करो । हित मित एव सत्य बोलो । हित मित सत्य वद !

शब्दज्ञानी :

□दर्शन और धर्म की चर्चा करने वाला शब्द ज्ञानी है । और स्वानुभव की बाते करने वाला आत्मज्ञानी । धर्म की चर्चा करने से कोई व्यक्ति आत्मज्ञानी नही हो सकता वह तो शब्दो का कोष मात्र हैं ।

शराफत :

□जिसमे शराफत और ईमानदारी नही उसके लिए समस्तज्ञान कष्टकारी है ।

शल्य ·

□जैसे नेत्रों मे थोडी सी रजकण भी उसे चैन से आराम नही लेने देती वैसे ही जिसके हृदय मे शल्य है, वह चैन से बैठ नही सकता ।

शांति :

□वह मनुष्य, चाहे वह राजा हो या किसान, सबसे भाग्यवान है जिसे अपने घर मे शान्ति मिलती हैं ।

□दुनिया की तमाम शान-शौकत से बढ़कर है आत्मशान्ति और शान्त अन्तरात्मा ।

शांति का उपाय :

☐ अपनी आवश्यकता को घटाकर दूसरे के अभाव की पूर्ति करना ही शान्ति का उपाय है।

शारीरिक श्रम :

☐ मानसिक व्यग्रता नष्ट करने का अव्यर्थ साधन है, शारीरिक श्रम।

शास्त्र और अनुयायी :

☐ किसी ने सन्त से पूछा—"तुम्हारा शास्त्र क्या है? किस भाषा मे है? और अनुयायी कौन है?" सन्त ने कहा—"चिन्तन और विचार मेरा शास्त्र है। आचार उसकी भाषा है। उसको जो भी पढ़े और उस पर चले वही मेरा अनुयायी है।"

शाश्वत आनन्द :

☐ विशुद्ध, शाश्वत आनन्द के दो ही उद्गम है—अपने को देना और अपने को पाना, समर्पण और साक्षात्कार।

शाश्वत जीवन

☐ हे प्रभु! ऐसी कृपा करो कि मेरा प्रयत्न दूसरो द्वारा समझा जाने का उतना न हो, जितना कि दूसरो को समझने का; प्यार किये जाने का उतना न हो, जितना कि प्यार देने का। क्योकि देने मे ही हम पाते हैं, माफ करने मे ही माफ होते है, दूसरो के लिए मरने मे ही शाश्वत जीवन पाते है।

शास्त्रार्थ :

□तालाब हो या नदी हो—किनारे पर खडे-खडे हजार वर्षतक तैरने की कला पर शास्त्रार्थ करने से व्यक्ति को तैरना नही आ सकता। धर्म के ऊपर शास्त्रार्थ करने से मनुष्य धार्मिक नही बन सकता।

शिक्षक :

□शिक्षक राष्ट्र की सस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे सस्कारों की जड़ों मे खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हे सीच-सीच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं।

शिक्षण :

□वाणी से विचार गहरे हैं। विचारसे भावना गहरी है। व्यक्ति दूसरे से जितना नही सीख सकता जितना खुद से सीखता है।

शील :

□शील मानव जीवन का अनमोल रत्न है। उसे जिस मनुष्य ने खो दिया उसका जीवन ही व्यर्थ है। वह चाहे जितना धनी अथवा भरे पूरे घर का हो उसका कोई मूल्य नही रहता।

शील का परिवार :

□दया, दम, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, सन्तोष, सम्यक् दर्शन, ज्ञान और तप ये सब शील के परिवार है।

शुद्ध सत्य :

☐निर्मल अंत करण को जिस समय जो प्रतीत हो वही सत्य है। उस पर दृढ रहने से शुद्ध सत्य की प्राप्ति हो जाती है।

शुद्धि :

☐सत्कर्म, सद्विद्या सद्धर्म, शील और उत्तम जीवन से ही मनुष्य शुद्ध होते है। उत्तम जाति, गोत्र या धन से नही।

शून्य :

☐पुत्रहीन के लिये घर सूना होता है, जिसका सन्मित्र नही है उसका समय सूना होता है, मूर्ख के लिए दिशाये सूनी होती है और दरिद्र के लिए सब कुछ सूना होता है।

शैतान की दुकान

☐सावधान रहना। यह दुनियाँ शैतान की दुकान है। इस मायावी दुनिया की दुकान मे इर्ष्या, लोभ, वासना जैसी अनेक आकर्षक वस्तुएँ है जो मूल्य मे सस्ती है किन्तु उसे लेने के बाद सर्वनाश निश्चित है।

शैशव :

☐शैशव मे समस्त मानवीय सद्गुणो के अंकुर विद्यमान रहते हैं। जो माता-पिता चतुर माली की भाँति अपने बच्चे मे उनकी देख रेख रखते है वे उसका उचित पुरस्कार पाते हैं।

शोभा :

☐सभी पदार्थ अपने-अपने स्थान पर ही सुशोभित होते हैं। स्थानभ्रष्ट होने पर नहीं। काजल आँख में सुशोभित होता है तो मेहन्दी हाथों और पैरों में।

☐धीरता से दरिद्रता सुशोभित होती है। स्वच्छता से कुवस्त्र भी शोभित होता है। कुरूपता सुशीलता से शोभा देती है और सदाचरण से मानव सुशोभित होता है।

शोषक :

☐जोंक खराब खून का शोषण करती है किन्तु गृह कलह, वैर, समाज के परिवार के स्वस्थ खून का शोषण करता है।

श्रद्धा :

☐श्रद्धा वस्तुतः निराश हृदय को मानवता, अवलम्बन और जीवन देने वाली वृत्ति है, श्रद्धा में आत्मसमर्पण होता है।

☐श्रद्धा वह चिड़िया है जो प्रकाश का अनुभव कर लेती है और अन्धेरे प्रभात में गाने लगती है।

☐श्रद्धा परमतत्त्व तक पहुँचाने वाली नौका है।

श्रम :

☐श्रम से स्वास्थ्य और स्वास्थ्य से सुख होता है।

श्रमण :

☐जिसका मन सर्वत्र सम रहता है, वह समण (श्रमण) है।

श्रमणत्व का सार :

☐श्रमणत्व का सार उपशम है।

श्रावक :

☐वही सच्चा श्रावक कहलाने का अधिकारी है, जो किसी की वहुमूल्य वस्तु को अल्पमूल्य देकर नही ले, किसी की भूली हुई वस्तु को ग्रहण नही करे और थोडे मुनाफे मे ही सतुष्ट रहे।

श्रेयस्कर जीवन :

☐सौ वर्ष तक दुराचारी तथा असयमी होकर जीना निरर्थक है, परन्तु सदाचारी तथा सयमी होकर एक दिन भी जीना श्रेयस्कर है।

श्रेष्ठ :

☐लाखो का दान देने वाले असयमी पुरुप की अपेक्षा कुछ भी न देने वाला सयमी पुरुप श्रेष्ठ है।

☐विश्वास रखिए—सव से श्रेष्ठ यदि कोई है तो वह तुम्हारी अपनी आत्मा ही हैं।

☐श्रमण समता से श्रेष्ठ होता है, द्वेप से नही, ब्राह्मण ब्रह्मचर्य के श्रेष्ठ होता है, वाह्य क्रियाकाण्ड से नही। तपस्वी क्षमा से श्रेष्ठ हाता है क्रोध से नही। मुनि मौन से श्रेष्ठ होता है, वाचालता से नही।

श्रेष्ठ कौन ?

☐आवश्यकता की पूर्ति जमीन भी करती है व साहूकार भी। साहुकार पूर्ति के बदले ब्याज लेता है किन्तु जमीन बिना कुछ लिए एक का सहस्र गुणा कर देती है। तो बताइये श्रेष्ठ कौन है ?

श्रेष्ठ पथ :

☐अच्छी संगति, अच्छी आदत व अच्छी भावना ये उन्नति के श्रेष्ठ पथ है।

श्रेष्ठ मित्र :

मनुष्य के श्रेष्ठ और सच्चे मित्र है उसके हाथ की दस अगुलिया।

श्रेष्ठ मुहूर्त :

☐काम करने का वही श्रेष्ठ मुहूर्त है जब मन मे काम करने का उत्साह उत्पन्न होता है।

श्रेष्ठ साधना :

☐लोकैषणा, वित्तैषणा और कामैषणा को जीतना ही श्रेष्ठ साधना है।

संकल्प

☐सकल्प करलो, सोच समझकर कर लो, किन्तु करने के वाद उसे मत छोडो, सत्य सकल्प ही मनुष्य को ईश्वर के दरबार में पहुँचाता है।

संकल्प वल :

☐विजय पाने के लिए माधनसम्पन्नता की उतनी आवश्यकता नही जितनी कि दृढ सकल्प वल की। जिसके पास सकल्प वल है, उसके पास साधन स्वय आ ही जाते है।

संकल्प-विकल्प ·

☐थोड़ी-सी खटाई भी जिस प्रकार दूध को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार राग-द्वेष का सकल्प-विकल्प सयम को नष्ट कर देता है।

संकल्प शक्ति .

☐हृदय की गुफा मे भरी हुई अनन्तशक्तियो के भण्डार का व्यवस्थित उपयोग करना हो तो सकल्प शक्ति का सहारा लेकर उसे सुव्यवस्थित वनाओ।

☐तुम अपने संकल्प शक्ति को सिद्ध करो। तव तुम पत्थर को भी सोने मे वदल सकते हो।

संकीर्ण मन :

☐सकीर्ण मन वाला आदमी अफ्रिका के भैसे की तरह होता है। वह वस सीधा सामने देखता है, दाये वाये कुछ नही।

संगति

☐ववूल के पेड के नीचे वैठने से काटा लगता है, वैसे ही दुष्टजनो की सगति से दुःख होना अवश्यम्भावी है।

संगति का प्रभाव :

☐बुरी वस्तु भी योग्य पुरुष को पाकर अच्छी बन जाती है। और उत्तम वस्तु भी नीच को पाकर खराब हो जाती है, जैसे अमृत पीने से राहु की मृत्यु हुई और विप के पीने से शकर के कण्ठ की शोभा बढ गई।

संघठन :

☐छोटी-छोटी वस्तुओ के सघटन से बडे-बडे कार्य सिद्ध होते है। घास की बटी रस्सियो के उन्मत्त हाथी भी बाँधे जाते है।

सन्त :

☐जिस प्रकार नाव पानी मे रहने पर भी पानी से अलिप्त रहती है उसी प्रकार सन्त जन ससार मे रहकर भी उससे अलिप्त रहते है।

☐वह सभा, सभा नही, जहाँ सत नही और वे सन्त सन्त नही जो धर्म की बात नही कहते। राग, द्वेष और मोह को छोड़कर धर्म का उपदेश करने वाले ही सन्त होते है।

सन्त समागम :

☐तीर्थ का फल तो समय आने पर मिलता है किन्तु सन्त समागम का फल तत्काल मिलता है।

सन्तोष :

☐अपने तुच्छ शारीरिक स्वार्थों को परित्याग करने के उपरान्त

जो सन्तोप सुख होता है वह चक्रवर्ती राजा हो जाने के सुख से भी हजारो गुणा अधिक है।

☐सुख पैसा नही माँगता, सुख सग्रह नही मागता, लेकिन सुख सन्तोप माँगता है।

संयम :

☐हमे अपने हृदय मे यह निश्चय कर लेना चाहिए कि भविष्य सयमी पुरुपो के हाथ मे है।

संविभाग .

☐सद्गृहस्थ अपनी सम्पत्ति का चार विभाग करे। एक विभाग का स्वयं उपभोग करे। दो भागो को व्यापार मे लगाये। एक भाग को धर्म कार्यों मे खर्च करे, एव एक भाग को आपत्तिकाल मे काम आने के लिए सुरक्षित रखे।

संवेग :

☐वेग को आवेग की गली मे नही किन्तु सवेग की सड़क पर दौड़ाइये।

संशय :

☐जो अज्ञानी, श्रद्धारहित और संशयवान् है उसके लिये न यह लोक है, न परलोक है, उसे कही सुख नही है।

संसर्ग-दोष .

☐जिस प्रकार मधुर जल, समुद्र के खारे जल के साथ मिलने

से खारा हो जाता है, उसी प्रकार सदाचारी पुरुष दुराचारियों के संसर्ग से दूषित हो जाता है ।

संसार .

☐ससार न अच्छा है न बुरा, यँह तो एक अनिर्मित लोहे के समान है जिसको जैसा चाहो वैसा बना सकते हो ।

संसार और मोक्ष :

☐चित्त जव तक चचल है, विषयो मे भटकता है तब तक ससार हैं । चित्त की निश्चलता, विषयो की अलिप्तता और आत्मा का ध्यान ही मोक्ष है ।

संस्कार-चिन्तन :

☐शिक्षा से सस्कार बनते है जैसी शिक्षा होगी वैसे सस्कार होगे । संस्कार को मिटाने का सामर्थ्य चिन्तन मे है । यम, नियम पालन करने से बुद्धि निर्मल होती है ।

संस्कृति :

☐जो सस्कृति महान होती है वह दूसरो की सस्कृति को भय नही देती बल्कि उसे साथ लेकर पवित्रता देती है । गगा महान क्यो है ? दूसरे प्रवाहो को वह पवित्र करती है ।

सच्चरित्र :

☐शास्त्र का थोडा-सा अध्ययन भी सच्चरित्र साधक के लिए प्रकाश देने वाला होता है । जिसकी आखे खुली है उसको एक

दीपक भी काफी प्रकाश दे देता है ।

☐ जिस प्रकार अच्छे से अच्छा जलपान भी हवा के विना महासागर को पार नही कर सकता । उसी प्रकार वडा से वडा तत्त्व ज्ञानी भी सच्चारित्र के विना भवसागर को पार नही कर सकता ।

☐ सच्चरित्र के अभाव मे केवल बौद्धिक ज्ञान सुगन्धित शव के समान है ।

सच्चा प्रेम :

☐ जब मजनू ईश्वर के दरबार मे पहुँचा तो ईश्वर ने कहा—भले आदमी, जितना प्रेम तुमने लैला से किया उतना प्रेम यदि मेरे से करता तो मैं कभी का तेरे सामने आ गया होता ।
मजनू ने उत्तर दिया—यदि आप मेरे प्रेम के भूखे होते तो आपको लैला बनकरके मेरे सामने आना था ।

सच्ची आराधना :

☐ राग द्वेष रहित हृदय, सत्य वचन और पवित्रता ईश्वर की सच्ची आराधना है ।

सज्जन :

☐ सज्जन के साथ यदि कोई अपकार करता है तो वे अपनी सज्जनता को नही त्यागते जैसे चन्दन के वृक्ष को काटने पर कुल्हाडी भी महकने लगती है ।

सज्जन के लक्षण :

□व्यवहारो की शुद्धता और दूसरो के प्रति आदर, यही सज्जन मनुष्य के दो मुख्य लक्षण है।

सज्जन स्वभाव :

□सज्जनो का स्वभाव सूप के समान होता है जो दोषरूप कंकड़ आदि को दूर कर देता है और गुणरूप धान्य को अपने पास रख लेता है।

सतत कार्यशीलता :

□यदि हमे स्वस्थ और प्रसन्न रहना है तो अपने शरीर और मन को सतत कार्य से लगाओ। क्योकि खाली मन भूतो का डेरा है। बेकार व्यक्ति को ही शैतानी सूझती है।

सतत प्रयत्न :

□प्रारम्भिक पराजय से कभी हताश मत बनो। निरन्तर युद्ध करते रहो सफलता सुनिश्चि है।

सत्कर्म :

□सत्कर्म की बाते श्रवण करने मात्र से जब हमारे मन मे आनन्द उत्पन्न होता है तो उसके आचरण मे कितना आनन्द होगा ?

सत्संग :

□सत्पुरुषो के साथ उठने बैठने से, उनके साथ मिलने जुलने से,

उनके अच्छे कर्तव्यो को जानने से, उनके वचन श्रवण करने से प्रज्ञा प्राप्त होती है ।

सत्य :

☐तुम सत्य को पहचानोगे तो सत्य तुम्हें स्वतत्र करेगा ।

☐सत्य को पाना तो बहुत सरल है । बस एक ही शर्त है कि हमारा हृदय सरल हो । सरल हो जाओ और तुम पाओगे कि सत्य तो तुम स्वय ही हो । हृदय की सहजता और सरलता को पा लेना ही धर्म है ।

☐सत्य और तेल सदा उपर रहते हैं । सत्य बोतल के ढक्कन के समान है, उसे पानी मे दबा दीजिए वह उपर आ जायेगा ।

☐सत्य ही भगवान है । 'सच्च खु भगव'

☐वर्फ और तूफान फूलो को तबाह कर सकते है लेकिन बीज नही मर सकते ।

☐कोई सत्य दूसरे सत्य का विरोधी नही हो सकता ।

सत्यभाषी

☐सत्यभाषी एक वार जो वचन कह देता है वह नवरूप हो जाता है । सैंकडो रोगो की वह औषध बन जाता है । और दरिद्र के लिए वरदान ।

सफल :

☐वही सफल होता है जिसका काम उसे निरन्तर आनन्द

देता रहता है।

सफल कौन ? .

☐धन को प्राप्त करना ही जीवन की सफलता नही, किन्तु प्राप्त धन का सदुपयोग करना ही जीवन की वास्तविक सफलता है।

सफल नीति :

☐भलाई के साथ भलाई और बुराई के साथ बुराई यह व्यवहार की नीति है। किन्तु बुराई के साथ अच्छाई यह धर्म नीति है।

सफलता :

☐वही मनुष्य सफल हो सकता है जिसके मन मे नये-नये आविष्कारो को आविष्कृत करने की उमगे उठती रहती है। जो कर्मक्षेत्र मे पर्वत की तरह अडिग रहता है, जिसकी मानसिक शक्तियाँ तेजस्वी, अटल व प्रतापी होती है।

☐सभी प्रकार की सफलताओ के लिए सच्चे पुरुपार्थ और धैर्य की अपेक्षा रहती है।

सफलता का चिह्न :

☐कठिनाइयो का बढ़ना ही सफलता के समीप पहुचने का प्रधान चिह्न है।

सफलता की कुंजी :

☐मनुष्य की सफलता उसकी प्रतिभा या अवसर की अपेक्षा निरन्तर अभ्यास एकाग्रता व कुशलता पर कही अधिक अवलम्बित है।

सफल व्यक्ति

☐प्रसन्न और मधुर व्यक्ति सदैव सफल होता है।

सब्र :

☐सब्र जिन्दगी के मकसद का दरवाजा खोलता है, क्योंकि सिवाय सब्र के उस दरवाजे की और कोई कुंजी नही है।

सभ्यता और संस्कृति :

☐सभ्यता शरीर है, संस्कृति आत्मा, सभ्यता जानकारी और विभिन्न क्षेत्रो मे महान् एव दुखदायी खोज का परिणाम है, संस्कृति ज्ञान का परिणाम है।

सभ्यता की परख :

☐सभ्यता की सच्ची परख देश की जनसंख्या, भव्य नगरो या अच्छी फसलो से नही होती, वरन् किस प्रकार के व्यक्ति देश मे जनमते है, इसी से होती है।

समझदारी :

☐मानव ! तू सम्पत्ति पाकर फूल कर कुप्पा हो जाता है और विपत्ति मे बड़ा व्याकुल हो जाता है। परन्तु यह क्यो नही

समझता कि यह तो भवान्तर मे किये हुये शुभाशुभ कर्मों के ही तो परिणाम है। दोनो मे समभाव रखना ही तो समझदारी है।

समता :

☐जब-जब बुद्धि समता की ओर बढती गई, त्यो-त्यो वह विकास के चरण चूमने लगी। किन्तु जब उसमे विषमता आई तो वह विनाश और पतनोन्मुख होती गई।

समन्वय :

☐विवाद कलह को जन्म देता है और सवाद समन्वय को। यदि हमे समन्वय को जन्म देना है तो हमे विवाद का अन्त करना होगा।

समभाव का रस :

☐पावभर का आम हो, पर उसे निचोडा तो तोलाभर भी रस न निकला तो वह आम किस भाव पडेगा ? घण्टो साधना की, अनेकों सामायिके व प्रतिक्रमण किये किन्तु समभाव का रस नही आया तो उस साधना का क्या मूल्य ?

समय :

☐समय, सत्य के सिवाय हर चीज को स्वाहा कर जाता है।

☐जो समय से आगे रहते है वे महान् है, जो समय के साथ चलते है वे साधारण, जो समय के पीछे-पीछे चलते हैं वे लघु है, अतः हे मानव ! जो समय से आगे है वह महान् है, परमात्मा से

भी। भक्ति आदि साधनो से परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है, किन्तु कोटि उपाय करने पर भी वीता हुआ समय नही बुलाया जा सकता।

☐समय से बहुत पहले काम निपटा लेना जल्दवाजी है, और समय निकल जाने पर मुह ताकते रहना आलस्य है। जो समय पर पुरुषार्थ द्वारा अपने साध्य को सिद्ध करता है उसे पछताना नही पडता।

☐समय की गति विचित्र है वह किसी की प्रतीक्षा नही करता।

☐जो समय रहते नही सभलते, समय उन्हे रहने नही देता।

समय मत लगाओ :

☐अच्छे कार्यो को करने मे विलम्व नही करना चाहिए और वुरे कार्यों मेँ शीघ्रता नही करनी चाहिए।

समय ही जीवन है

☐क्या आप सचमुच जीवन से प्रेम करते हो ? यदि हाँ, तो समय का अपव्यय क्यो करते हो ? क्या आप को मालूम नही कि समय ही आपका जीवन है।

समाज सुधार की चार भूमिकाएं

☐समाज सुधार की चार भूमिकाए है—

पहली भूमिका है—परिस्थिति-परिवर्तन ! यह काम सरकार द्वारा हो सकता है।

दूसरी भूमिका है—हृदय परिवर्तन। यह कार्य सन्तो के द्वारा हो सकता है।

तीसरी भूमिका है—विचार परिवर्तन। यह विचारको व साहित्यकारो द्वारा हो सकता है?

चौथी भूमिका है—सेवाकार्य। यह समाजद्वारा हो जाते है।

समाधान :

☐सुख का अक्षय कोष मानव मन के समाधान मे है भौतिक सुख सुविधाओं मे नही। यदि मनुष्य को अन्दर मे समाधान मिलता है तो फिर साधन भी असाधन हो जाते है।

समाधि :

☐जैसे नमक पानी मे मिलकर एकाकार हो जाता है वैसे ही जो मन और आत्मा से एकाकार हो जाता है वही समाधिवान है।

समृद्धि :

☐धृति, क्षमा, दया, पवित्रता, करुणा, मधुरवाणी, मित्रो के साथ द्रोह न करना ये सात गुण मनुष्य की समृद्धि की वृद्धि करते है।

सम्पत्ति :

☐जो दुखी जनो की विपत्ति को नाश करतो है वही सम्पत्ति है। शेष विपत्ति है।

सम्बन्धी नहीं :

☐यमराज का कोई सम्बन्धी नही है।

लक्ष्मी का कोई सम्बन्धी नही है ।
वृद्ध व्यक्ति का कोई स्वजन नही ।
स्वार्थी व्यक्ति का कोई सम्बन्धी नही ।
मृत्यु का कोई अपना नही ।

सम्मान :

☐आप सम्मान देने के लिए किसी को मजबूर नही कर सकते। किन्तु दूसरो को सम्मान दीजिए, वे स्वय मजबूर हो जायेगे कि आपको सम्मान दे ।

सम्मान और अपमान

☐मनुष्य को सम्मानित बनने के लिए समस्त जीवन भी अल्प है किन्तु अपमानित होने के लिए एक क्षण भी काफी है ।

सम्यक् विचार :

☐सम्यक् विचार से मानव जीवन का प्रारम्भ होता है ।

सर्वगुणसम्पन्नता

☐गुलाब का फूल रग,रूप और सौरभ के कारण फूलो का राजा कहलाता है लेकिन काटो का साथ होने के कारण वह बदनाम भी है। मानव सर्वगुण सम्पन्न हो यह असम्भव है, किन्तु अपने विशिष्ट सद्गुणो के द्वारा ससार मे प्रख्यात बन जाता है। जैसे आम वृक्ष अपने फलो के कारण, नागर बेल अपने पान के कारण और चन्दन काष्ठ अपनी महक के कारण प्रख्यात है ।

सर्वोदय :

☐सब सुखी रहें, सब स्वस्थ रहें, सब कल्याणभागी बने, कोई कभी दुःखी न हो।

सहनशक्ति :

☐यदि हम विरोध पर प्रेम द्वारा विजय नही पा सकते तो एक उपाय बचता है और वह है—सहन करना। हमे या तो सहन करना होगा या पलायन।

सह प्रवासी :

☐रेलगाडी का इंजन प्रबल वेग से अपने निर्दिष्ट स्थान पर अकेला ही चलकर नही जाता वल्कि अनेक डिब्बो को भी अपने साथ खीचकर ले जाता है। उसी प्रकार तीर्थंकर, श्रमण अपने ज्ञान के द्वारा हजारो भव्यो को प्रतिवोधित कर अपने साथ सिद्धधाम को ले जाते है। क्योकि भगवान "तिन्नाण तारयाण" है।

सहायता दो :

☐जो आश्रयहीन है उन्हे निःसकोच आश्रय दो। क्योकि आश्रय देने से अपनी सौरभ वढती है।

सादगी :

☐सादगी जीवन का शृंगार अवश्य है किन्तु उसमें प्रदर्शन की भावना नही होनी चाहिए।

□चरित्र मे, इख्लाक मे, शैली मे सब चीजो मे बेहतरीन कमाल है—सादगी ।

साधन-जीवन ·

□उद्योग, प्रयोग और योग-यही साधक के जीवन का सक्षिप्त स्वरूप है ।

साधक-बाधक .

□धर्म मे साधक एव बाधक इन्द्रियो का सदुपयोग और दुरुपयोग ही है ।

साधना

□हमे साधना की चिन्ता करनी चाहिए सिद्धि की नही । साधना स्वय सिद्धि की चिन्ता करती है ।

साधु :

□संसार रूपी समुद्र मे साधुरूपी नौका धन्य है, जिसकी उलटी ही रीति है । उसके नीचे रहने वाले तिरते है और ऊपर रहने वाले नीचे गिरते हैं, अर्थात् मुनि जनो से नम्र रहने वालेतिर जाते है और नम्र न रहने वाले धर्म के स्वरूप का ज्ञान न होने से डूब जाते है ।

सापेक्षवाद :

□अपने-अपने पक्ष मे ही परस्पर निरपेक्ष सभी मत मिथ्या है, असम्यक् है । परन्तु ये ही मत जब परस्पर सापेक्ष होते है, तब

सत्य और सम्यक् बन जाते है ।

सामायिक :

□सामायिक का अर्थ है—सावद्य अर्थात् पापजनक कर्मों का त्याग करना और निरवद्य अर्थात् पाप-रहित कार्यों का स्वीकार करना ।

सामायिक का फल :

□एक आदमी प्रतिदिन लाख स्वर्णमुद्रा का दान करता है और दूसरा मात्र दो घडी की सामायिक करता है तो स्वर्ण-मुद्राओ का दान करने वाला व्यक्ति सामायिक करने वाले की समानता प्राप्त नही कर सकता ।

सार :

□सृष्टि का सार 'धर्म' है ।
धर्म का सार सम्यक्ज्ञान है ।
ज्ञान का सार 'सयम' है ।
और सयम का सार 'निर्वाण' है ।

सावधान :

□सावधान रहना ! जो आदमी तुम्हारे सामने दूसरो की निन्दा करता है, वह दूसरो के सामने तुम्हारी निन्दा अवश्य करता है । ऐसे आदमियो की बातों मे न फसना, नही तो बडी भारी आपत्तियो का सामना करना पड़ेगा ।

साहस

☐अपसाहस या दुस्साहस पशुता है। सत्साहस मानवता। साहस मे जब विवेक का पुट लगता है, तब वह सत्साहस कहलाता है।

☐साहस गया तो आदमी की आधी समझदारी उसके साथ गई।

☐विपत्ति के समय सबसे बडा मित्र साहस है। जिसका सहारा लेकर विपत्तिग्रस्त विपत्ति मे पार पहुँचता है।

साहित्य :

☐बुद्धि के शैथिल्य को दूर करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय साहित्य है। मन की कुण्ठाओ को, जडता को दूर करने की रामबाण औषधि साहित्य है। साहित्य बुद्धि और मन का परिष्कार करता है।

सीखते है :

☐ज्ञानी विवेक से, साधारण जन अनुभव से, मूर्ख आवश्यकता से और पशु अनुसरण से सीखते हैं।

सीखो :

☐यदि तुम्हे आगे बढना है तो पहले की गई भूलो से आगे बढने का मार्ग खोजो।

सुख और आनन्द :

☐सुख और आनन्द ऐसे इत्र है, जिन्हे जितना अधिक आप दूसरो पर छिडकेंगे उतनी ही अधिक सुगन्ध आपके अन्दर आयेगी ।

सुख-दु ख .

☐जिस प्रकार बिना भूख के खाया हुआ अन्न नही पचता, उसी प्रकार विना दुख के सुख पच नही सकता ।

सुख-विमुखता :

☐ऐसी कौन-सी वस्तु है जो हमे सुख से विमुख करती है । घमड, लालच, स्वार्थपरता और ऐश्वर्य की आकाक्षा ।

सुखी :

☐वही आदमी सुखी है और सबसे ज्यादा सुखी है जो आज को अपना कह सके । कल के लिए रोने वाला सदैव सुख से वञ्चित रहता है ।

स्नान :

☐तप और ब्रह्मचर्य विना पानी का स्नान है ।

स्पर्धा और प्रतियोगिता

☐स्पर्धा असमर्थ व्यक्ति करता है और समर्थ प्रतियोगिता । स्पर्धा मे दूसरे को अभिभूत करने का विचार उग्र बनता है और प्रतियोगिता मे अपने विकास के प्रति सजग बनने का मनोभाव ।

स्मशान :

☐संसार का मूक शिक्षक स्मशान है। उससे डरने की हमे आवश्यकता नही। चक्रवर्ती और दरिद्र वहाँ समान हो जाते है। विश्वविजयी योद्धा भी वहाँ नतमस्तक है। नश्वरता का पाठ हमे वही मिलता है।

स्याही की एक बूंद :

☐स्याही की एक बूंद दस लाख व्यक्तियो को विचारमग्न कर सकती हैं।

स्त्री :

☐स्त्री एक ऐसी पहेली है जिसे आज तक कोई समझ नही सका।

☐स्त्री जाति मे हर उम्र मे मातृत्व का अंश रहता है, और वही अंश उनमे सहिष्णुता, क्षमा और स्नेह को प्रेरित करता है, दुःख को कम करने की शक्ति लाता है, और इसी से उनका दिग्विजय इतना सरल हो जाता है।

☐स्त्री काटेदार झाडी को नयनरम्य बगीचा बनाती है, दरिद्र से दरिद्र घर को सुशील स्त्री स्वर्ग बना देती है।

☐सौदर्य स्त्रियो को अभिमानी बनाता है। सद्‌गुण उसे प्रशंस-नीय बनाता है और नम्रता उसे साक्षात् देवी बनाती है।

स्वभाव :

☐स्वभाव को अच्छे बुरे की उपाधि देना गलत है। क्योकि वह अपने स्वत के मकान मे है। हा, यदि, स्वभाव विभाव मे परिणत हो जाता है तो वह खतरनाक है।

स्वयं देख नहीं सकता ·

☐दीपक दुनियाँ को प्रकाशित करता है किन्तु स्वय अन्धकार मे रहता है। उसे अपना अन्धेरा नही दिखाई देता। तद्वत् मानव दूसरे के गुणावगुण को बताता है, किन्तु अपने विषय मे अन्धेरे मे रहता है। उसे अपने अवगुण नही दिखाई देते।

स्वर्ग :

☐जहा प्रेम, स्नेह, सहानुभूति, समवेदना और सद्भावना की अमृतमयी गगा वहती हो वही स्वर्ग है।

☐सात्त्विक गुणो का विकास ही मनुष्य के लिए स्वर्ग है।

स्वर्ण सूत्र :

☐मित्रों के प्रति सच्चा प्रेम, शत्रु के प्रति उदारता और प्रत्येक मनुष्य के साथ सद्भाव—ये तीन स्वर्ण सूत्र मानव को महान वनाते हैं।

स्वस्थ मन :

☐स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रह सकता है तथा इसके साथ ही यह भी उतना ही सत्य है कि स्वस्थ मन हो तो शरीर

भी स्वस्थ रहता है ।

स्वस्थ हसी :

☐स्वस्थ हसी मनुष्य के चरित्र की वहुत वड़ी देन है । कष्टो मे हसने वाले ही चरित्रवान होते है ।

स्वाध्याय :

☐स्वाध्याय से वढकर कोई तप नही ।

स्वार्थ :

☐जिस मानव मे स्वार्थ भरा है, उसके पास परार्थ कहाँ से आ सकता है । जिस पुष्प मे सुगन्ध नही, वहा भ्रमर कैसे आ सकते है ।

हंसी :

☐मनुष्य वरावर वालो की हसी नही सह सकता, क्योकि उनकी हसी मे ईर्ष्या, व्यग्य एव जलन होती है ।

☐नमक वडी अच्छी चीज है, पर जीभ पर छाले हो तव कैसा लगता है ? हसी वडी अच्छी चीज है, पर छाले पडे मन को वुरी लगती है ।

हिम्मत :

☐वीमारी मे, मुसाफरी मे, लडाई मे तथा नुकसान मे मनुष्य को हिम्मत नही हारनी चाहिए ।

हृदय :

☐ससार की कटुताओ के सम्पर्क मे आकर हृदय या तो सदा के लिए भग्न हो जाता है या फिर सदा के लिए कडा।

हृदय की सहज वृत्तियाँ :

☐श्रद्धा, विश्वास, सत्य, न्याय, प्रेम, उदारता, धैर्य, आशा, उत्साह, दया, करुणा, त्याग और निर्भीकता ये हृदय की सहज सद्वृत्तियाँ है। सुसस्कृत चित्त के ये स्वाभाविक सद्गुण है।

सुवर्ण-पुष्प

☐शूर, वीर, विद्वान और सेवाधर्म के ज्ञाता—ये तीन पुरुष पृथ्वीरूप लता से ऐश्वर्य रूपी सुवर्ण पुष्पो का चयन करते है।

सेवा :

☐सेवा का अधिकार प्राप्त करने के लिए दो चीजे आवश्यक है, एक सेवा का अभिमान न होना तथा सेवा के बदले फल की कामना न करना।

☐सेवा के एक श्रेष्ठ गुण से आदमी महान बनता है। किन्तु उसमे एक शर्त है—निष्काम वृत्ति।

सेवा सदन :

☐जीवन न मनोरंजन का स्थल है न आसुओ की खान। जीवन एक सेवा-सदन है।

सौंदर्य :

☐स्त्री मे सौंदर्य लाया जाता है जबकि पुरुष मे स्वाभाविक होता है ।

☐चारित्रयुक्त सौंदर्य ही सच्चा सौंदर्य है ।

क्षमा :

☐अपने साथ की गई बुराई को बालू पर लिखो और भलाई को पत्थर पर ।

☐क्षमा करना अच्छा है, भूल जाना उससे भी अच्छा है ।

☐बदला लेना मानवी है, परन्तु क्षमा करना दैवी है । यदि हममे दूसरो को क्षमा करने की शक्ति नही तो प्रभु हमे कैसे क्षमा करेंगे ?

क्षुधा :

☐पेट जब भूखा होता है तब बुद्धि भी अनाचार की ओर दौड़ती है ।'बुभुक्षित किं न करोति पापम्'

त्राण :

☐उत्कर्ष व अपकर्ष से त्राण पाने का एक ही विकल्प है और वह यह कि जब उत्कर्ष प्राप्त हो, तब अपने से अधिक उन्नत व्यक्तियो को देखे, और जब अपकर्ष उत्पीड़ित करे तब अपने से अधिक अवनत स्थिति वालो को निहारे ।

ज्ञान :

☐ज्ञान जब इतना घमंडी बन जाय कि वह रो न सके, इतना गम्भीर बन जाय कि हंस न सके और इतना आत्म केन्द्रित बन जाय कि सिवाय अपने और किसी की चिन्ता न करे तो वह अज्ञान से भी अधिक खतरनाक होगा।

☐वही ज्ञान सच्चा ज्ञान है, जिससे हृदय और आत्मा पवित्र हो, बाकी सब ज्ञान का विपर्यास है।

☐मन रूपी उन्मत्त हाथी को वश करने के लिए ज्ञान अकुश के समान है।

☐जीवन खेत है, मनुष्य किसान और कर्म बीज है। उन्हें बोना जैसा अनिवार्य है वैसा उन्हें काटना भी। बस इतना ही ज्ञान काफी है।

ज्ञान और क्रिया :

☐ज्ञान अक है, तो क्रिया काण्ड उसके आगे लगने वाला बिन्दु। अंक के बिना शून्य का क्या मूल्य? ज्ञान के बिना क्रिया का क्या मूल्य?

☐ज्ञान और क्रिया का सयोग ही मोक्ष रूप फल देने वाला होता है। एक पहिये से कभी गाड़ी नही चलती। इसी प्रकार ज्ञान और क्रिया के सयोग से ही आत्मा मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

□आचारहीन ज्ञान नष्ट हो जाता है और ज्ञानहीन आचार। जैसे वन मे अग्नि लगने पर पगु उसे देखता हुआ और अन्धा दौडता हुआ भी आग से बच नही पाता, जलकर नष्ट हो जाता है।

□जानना काफी नही है, ज्ञान से हमे लाभ उठाना चाहिए, इरादा काफी नही है, हमे काम करना चाहिये।

ज्ञान का जनक :

□शान्त चिन्तन ही ज्ञान का जनक है। क्योकि ज्ञान पढने से नही, चिन्तन मे प्राप्त होता है।

ज्ञान युक्त कर्म :

□बन्धन मुक्ति केवल कर्म मे नही, केवल ज्ञान से भी नही। किन्तु ज्ञान युक्त कर्म मे होती है।

ज्ञान विराधना

□ज्ञान को तथा ज्ञानी की निन्दा करना, गुरु आदि का अपलाप करना आशातना करना, ज्ञानार्जन मे आलस्य करना, दूसरे के अध्ययन मे अन्तराय डालना, अकाल मे स्वाध्याय करना ज्ञान-विराधना है।

ज्ञानसग्रह

□मधुमक्षिका पुष्पो मे से बिना पुष्पो को कष्ट पहुँचाये पराग सग्रह करती है उसी प्रकार हे मानव ! तुम्हे भी पापो से अलिप्त

रहकर ज्ञान सग्रह करना चाहिए।

ज्ञानी :

□मन की बाते माने वह मानी और आत्मा की बात माने वह ज्ञानी ।

ज्ञानी सजग रहे :

□अध्यात्मवादी व ज्ञानी को सतत सजग रहने की आवश्यकता है। क्योकि उसकी जरासी भूल भी दुनियां की नजरो में चढ़ जाती है। शुभ्र वस्त्र मे छोटा सा दाग तुरत नजर में आता है।